पूर्वसूत्र

कृतज्ञ स्मरण

"The further backward you can look, the further forward you are likely to see"

— Winston Churchil

–दत्तोपंत्त ठेंगडी

१. सूर्योदय से पूर्व

पच्चीस नवम्बर, १८१७ को सीताबर्डी की लड़ाई हुई। ३० दिसम्बर, १८१७ को नागपुर में भोंसलों के पुराने महल पर अंग्रेजों का यूनियन जैक लहराया गया। ६ जनवरी, १८१८ को अप्पा साहब भोंसले ने अंग्रेजों के साथ हुई संधि पर हस्ताक्षर किए। २४ मार्च, १८१८ को अप्पा साहब को अंग्रेज विरोधी षड्यंत्रकारी के रूप में कैद कर लिया गया। अंग्रेजों की सेना उन्हें प्रयाग ले जा रही थी कि १३ मई, १८१८ को रास्ते में ही अप्पा साहब अंग्रेज के हाथ से निकल गए और गुप्त वेश में देश-भ्रमण करके विभिन्न राजाओं से सम्पर्क स्थापित करने लगे। इसी प्रयास में वे जोधपुर पहुँचे जहाँ उनका रहस्य खुल गया और जोधपुर के राजा ने उन्हें पकड़ लिया। किन्तु अप्पा साहब को अंग्रेजों के हवाले करने की अंग्रेज सरकार की मांग जोधपुर के राजा ने नहीं मानी। उन्होंने जोधपुर में ही अप्पा साहब को अतिथि कैदी के रूप में सम्मानपूर्वक रखा। वहीं १८४० में उनकी मृत्यु हो गई। १३ मार्च, १८५४ को भोंसलेशाही के प्रदेश सीधे अंग्रेजी साम्राज्य में शामिल किए गए। अक्तूबर, १८५४ के अन्त में नागपुर का खजाना लूटने का काम शुरू हुआ। लूट का माल पशुओं पर लादकर ले जाने का काम एक महीने से अधिक समय तक चला। १३ जून, १८५७ को नागपुर के निकट टाकली के घुड़सवार दल ने अंग्रेजों के विरुद्ध में विद्रोह का झंडा लहराया। किंतु उसको दबा दिया गया। इसके कुछ माह बाद चन्द्रपुर विभाग के गोंड लोगों ने अंग्रेजों को ललकारा। परन्तु उनकी लड़ाई अधिक समय तक न चल सकी। उनके नेता बापूराव गोंड तथा व्यंकट राव गोंड को पकड़ लिया गया। २० अक्तूबर, १८५८ को इन दोनों स्वातंत्र्य-वीरों को अंग्रेजों ने मार डाला। इस प्रदेश के स्वातंत्र्य-युद्ध की समाप्ति इन दोनों गोंड सेनानियों के आत्मबलिदान से हुई। सन् १८६१ में नागपुर तथा सागर संभाग को मिलाकर "सेंट्रल प्रोविंसेज" की शासकीय इकाई बनाई गई और इस प्रदेश में अंग्रेजी राज के सुदृढ़ीकरण का काम पुरा हुआ।

हजारों मील दूर से अत्यल्प संख्या में यहाँ आकर साम्राज्य स्थापित करना तथा उसको टिकाना कितना कठिन होता है, इसकी कल्पना वे नहीं कर सकते जो यह मानते हैं कि सत्ता-प्राप्ति के लिए सस्ती लोकप्रियता ही पर्याप्त है। इसके लिए पूर्व तैयारी, निरंतर सावधानी तथा भविष्य-दृष्टि की आवश्यकता हुआ करती है।

ये कार्य कठोर परिश्रम से ही सम्पन्न होते हैं। अंग्रेज सेंट्रल प्रोविंसेज में जब सत्ता से कोसों दूर थे, तभी से उन्होंने इस प्रदेश के विषय में सर्वकंष जानकारी एकत्रित करनी शुरू की थी। यहाँ की सामान्य भौगोलिक स्थिति, सामरिक दृष्टि से विभिन्न विभागों की जानकारी, भाषाएँ तथा साहित्य, कला, शास्त्र, यहाँ की ऋतु, पशु-पक्षी, फसलें, वन तथा वन्य वस्तुएँ, स्थानीय लोग, इतिहास, धार्मिक मान्यताएँ, सामाजिक रीति-रिवाज, सार्वजनिक उत्सव, विभिन्न जातियों और उपजातियों के नेताओं के नाम, उनके स्वभाव, उनके बल तथा उनकी दुर्बलताओं के बिन्दु आदि संभावित जानकारी अंग्रेजों के पास सत्ता हाथ में आने के पूर्व से ही थी। उनकी पुस्तिका–मैन्युअल– में इन सब पहलुओं के बारे में बहुत बारीकि के साथ जितनी जानकारी ग्रथित रहती थी उतनी समग्र जानकारी स्थानीय लोगों को भी नहीं होती थी। पिछली शताब्दी के नागपुर का समग्र चित्र जितना अंग्रेजों के पास था, उतना किसी भी स्थानीय व्यक्ति या व्यक्ति-समूह के पास नहीं था। इसी आधार पर साम्राज्य-निर्माण करके वे उसकी नींव मजबूत बना सके। इस प्रक्रिया के लिए आवश्यक विभिन्न क्षेत्रों में उन्होंने व्यक्तिगत सम्बन्ध पहले से ही निर्माण किए हुए थे। वे हमारे राष्ट्र के शत्रु अवश्य थे; किन्तु यह स्वीकार करने में संकोच नहीं करना चाहिए कि उनकी यह कार्यपद्धति किसी भी विजिगीषु समाज के लिए अनुकरणीय है।

नागपुर तथा आसपास के प्रदेश में गोंड लोगों की बस्ती अधिक होने के कारण उस क्षेत्र को पहले "गोंडवन" नामाभिधान प्राप्त था। आज इनके बारे में यह धारणा है कि ये पिछड़ी वनवासी जाति के लोग हैं, किंतु उस समय यह बात नहीं थी। उनके बड़े-बड़े राज्य थे। भारत के अन्य क्षत्रियों के समान गोंडों में भी क्षात्रधर्मी लोग थे। उनको राजगोंड कहा जाता था। अभी भी नागपुर में गोंड राजा का किला-वास्तु जीवमान है। देश के अन्य क्षत्रियों के समान ही गोंड भी शूरमा और शौर्यवान थे। रानी दुर्गावती का पराक्रम कौन नहीं जानता। इस प्रदेश में उन दिनों जंगल बहुत थे। गोंड नगरों, ग्रामों और वनों में सर्वत्र बसे हुए थे। किंतु निवास के आधार पर कोई भेद निर्माण नहीं हुए थे। बिरादरी एक ही थी। निवास भिन्न-भिन्न थे। राज्यकर्त्ता गोंड तथा वनों में रहने वाले गोंड एक ही बिरादरी के थे और दोनों वैसा अनुभव भी करते थे। भोंसलों की अधिसत्ता स्थापित होने के पश्चात् उन्होंने भी गोंडों की स्वायत्त रचना में कहीं भी, कोई भी हस्क्षेप नहीं किया।

भोंसलेशाही के अन्य प्रजाजनों के साथ गोंडों के सम्बन्ध अपनेपन के थे। भोंसलों की यह विशेषता रहीं कि सम्पूर्ण प्रजा के साथ उनके पितृवत् सम्बन्ध रहें। उनका व्यवहार सभी के साथ समदृष्टि का रहा, इस कारण विभिन्न जातियों तथा सम्प्रदायों के लोगों में परस्पर सामंजस्य बना रहा।

नागपुर के प्रमुख समुदाय थे, महार, गोंड, कोष्टि, बुद्धिजीवी, देशी कारीगर आदि। सभी के परस्पर सम्बन्ध मधुर थे। गोंड भी सबके साथ अपनापन महसूस करते थे। मुसलमानों की संख्या नगण्य थी।

यह वस्तुस्थिति अंग्रेजों को अखरने वाली थी; क्योंकि उनकी "फूट डालों और शासन चलाओ" नीति के लिए यह स्थिति अनुकूल नहीं थी। उन्होंने धीरे-धीरे अपनी रणनीति बनाई।

भोंसलों के जमाने में जंगलों का उपयोग उनके समीपवर्ती गाँवों के लोग अपनी आवश्यकता के अनुसार समान रूप से करते थे। जंगल सबकी साझा सम्पत्ति थे। अब अंग्रेजों ने गोंडों को यह बताना शुरू किया कि "जंगलों पर केवल तुम लोगों का ही अधिकार होना चाहिए। जंगल की लकड़ी और वहां पैदा होने वाली चींजों पर तुम्हारा अधिकार है। बाहर के लोग आकर यहाँ की लकड़ी और यहां उत्पन्न होने वाली अन्य वस्तुएं ले जाते हैं। यह तुम्हारे अधिकारों पर आक्रमण हैं। इसमें तुम्हारा नुकसान है। इस आक्रमण को रोकना तथा जंगलों की सभी चीजों को अपने लिए सुरक्षित रखना ही तुम्हारे हित में है। अंग्रेज सरकार ऐसी व्यवस्था बना सकती है।"

परिस्थितिपूर्ण नियंत्रण में आने के पश्चात् सरकार ने वनवासियों के अधिकारों में धीरे-धीरे अधिकाधिक कटौती करनी शुरू की। किंतु यह प्रक्रिया बहुत धीमी थी, इस कारण किसी भी स्तर पर किसी को भी एकदम चुभने वाली नहीं थी। यह रेगमाल-प्रक्रिया (सैण्ड पेपर ट्रीटमेंट) लम्बे समय तक चलने के पश्चात् ही लोगों के ध्यान में आनी संभव थी। हुआ भी वैसा ही। अब तो वनवासियों के आन्दोलन इसलिए भी होने लगे हैं कि जंगलों पर उनके परम्परागत अधिकार वापस होने चाहिए। किन्तु सवा सौ, डेढ़ सौ साल के पूर्व हालत दूसरी थी। अंग्रेजों की बात उन्हें आकर्षक लगी। फूट के बीज बोने में अंग्रेज सफल हुए।

नागपुर के समाज में प्रमुख स्थान रखने वाली जातियों में महार और कोष्टि (बुनकर) की गिनती होती थी। भोंसलों की सेना में महार लोगों को संख्या तथा पद, दोनों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। महाराष्ट्र के महारों का पराक्रम हिन्दू साम्राज्य के संवर्धन में सहायक रहा है। इसी कारण पेशवाओं की सेना में भी उनको महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। भोंसलों के पूर्व दिग्विजय के दौरान महारों ने अच्छा कार्य किया था। विजय प्राप्त होने के पश्चात् प्रशासन कायम करने के समय नागपुर से उड़ीसा तथा नागपुर से बंगाल तक जो सैनिक चौकियां बनाई गईं, वे प्रमुख रूप से महारों के ही हाथ में थीं। भोंसलों का व्यवहार उनके प्रति सम्मानपूर्ण होने के कारण उनके मन में स्वाभिमान, स्वामिनिष्ठा तथा समाज के विषय में आत्मीयता थी। अंग्रेज शासन ने उनको महत्व तो नहीं दिया; किन्तु उनके स्वाभिमान को चोट न पहुँचे, यह सावधानी अवश्य बरती।

नागपुर के सूती तथा रेशमी वस्त्रों की मिस्र तथा यूरोप के बाजारों में बहुत मांग थी। इसके निर्माता कोष्टि (बुनकर) थे। इस उद्योग को राजाश्रय प्राप्त होने के कारण इसे सभी आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हुआ करती थीं। अब राजाश्रय समाप्त हुआ। देशी दस्तकारियों को समाप्त करना अंग्रेजों की नीति रही। इंग्लैण्ड में मशीनों पर बुने कपड़ों को कर मुक्त करके उन्होंने भारत लाना शुरू कर दिया। परिणामत: कोष्टि लोगों का व्यवसाय गिरने लगा और उनकी पहले की आर्थिक समृद्धि कम होने लगी। इस कारण इस समाज में असंतोष तो पैदा हुआ; किन्तु वह इस सीमा तक नहीं पहुँचा कि उनके मन में विद्रोह की इच्छा निर्माण हो।

सम्पूर्ण देश की तरह नागपुर प्रदेश में भी किसानों की संख्या बहुत थी। भोंसलों के राज में किसानों से लगान वसूल करने की पद्धति सरल तथा मानवीय थी। किसान के पास उनके परिवार के पोषण के लिए पर्याप्त अनाज रहे तथा अगली फसल निकालने की हैसियत भी रहे, इसकी चिन्ता करते हुए लगान वसूल किया जाता था। शासक तथा किसान के बीच व्यक्तिगत स्तर के सम्बन्ध थे। अंग्रेजों ने इस व्यक्तिगत स्तर का स्वरूप बदलकर अवैयक्तिक बना दिया। उन्होंने गाँवों में जमींदार तथा मालगुजार वर्ग का निर्माण करके उनको सम्पत्ति के पूर्ण अधिकार प्रदान किया, जो हिन्दू परम्परा के प्रतिकूल था। हिन्दू परम्परा में भूमि पर निजी मालकियत के लिए स्थान नहीं था। यह घड़ी ग्रामीण अपक्रान्ति की थी। इस नए वर्ग, जमींदार तथा मालगुजार, में लगान के रूप में अधिकाधिक धन वसूल करने

की प्रवृत्ति बढ़ने के कारण किसानों पर जुल्म-जबर्दस्ती करने की इच्छा भी बढ़ने लगी। शोषित-पीड़ित किसानों द्वारा आवाज उठाने का प्रयास करने पर सरकार पूरी शक्ति के साथ उत्पीड़न करने वाले इस नए वर्ग का समर्थन करने के लिए सामने आती थी। इस कारण नागपुर प्रदेश के किसानों में घोर असहायता का भाव व्याप्त हुआ।

औद्योगीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ तो हुई थी; किन्तु नियमित अर्थ में मजदूर वर्ग का निर्माण तब तक नहीं हुआ था। प्रदेश में यातायात के साधनों की कमी थी। नागपुर में पहली रेलवे सन् १८६७ में आई। उसके बाद इस शताब्दी के प्रारम्भ तक चार रेलवे लाइनें और आईं। नागपुर से पाँच प्रमुख केन्द्रों को जोड़ने वाले पाँच पक्के रास्ते बने; तो भी यातायात के साधनों की कितनी कमी थी, इसका अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि सन् १९०८ तक नागपुर को वर्धा या विदर्भ से जोड़ने वाला अच्छा रास्ता नहीं बना था। सन् १८७० में नागपुर में मॉडल मिल की स्थापना हुई। १८७७ में एम्प्रेस मिल का निर्माण हुआ। दोनों मिलों में काम करने वाले मजदूरों में आज के अर्थ में मजदूर भाव नहीं था। व्यक्तिगत अपमान की प्रतिक्रिया के रूप में एकाध संगठन था, लेकिन नेतृत्व के नाते वह मान्य अर्थ में ट्रेडयूनियनबाद का परिणाम नहीं था। देश में भी तब तक ट्रेड यूनियनबाद का जन्म नहीं हुआ था।

भोंसलों के समय प्रदेश की स्थानीय जनता में स्थानीय मुसलमानों का स्थान उल्लेखनीय नहीं था। यह सही है कि भोंसलों तथा उनके कुछ सरदारों, मनभट पंडित जैसों के पास अरब सैनिकों की पलटने थीं और उनका कार्यकलाप भी संतोषजनक था। २५ नवम्बर, १८१७ को सीताबर्डी की लड़ाई में हिन्दुओं के साथ अरब सैनिकों ने भी पराक्रम किया था। किन्तु वे स्थानीय नहीं थे। स्थानीय मुसलमानों की संख्या नगण्य थी तो भी अंग्रेजों ने पुलिस विभाग तथा अन्य अधिकार वाले पदों पर पचास प्रतिशत से अधिक स्थानों पर मुसलमानों की नियुक्ति की। ८ जुलाई, १८७९ के "बरार मित्र" के सम्पादकीय ने सवाल किया था कि "क्यों केवल मुसलमानों को ही तहसीलदार के पद पर नियुक्त किया जाता है?" पुलिस तथा अफसरशाही के मन में यह भाव स्पष्ट रूप से निर्माण किया गया कि तुम स्थानीय जनता से श्रेष्ठ हो, उन पर नियंत्रण रखने का काम तुम्हारे हाथ में है। इन दोनों को आम नागरिकों के विरोध में खड़ा कर दिया गया। उन

दिनों ईसाइयों की स्थिति ध्यान देने लायक नहीं थी। सन् १८४५ में यहाँ स्टीफन हिस्लॉप ने स्काटिश मिशन की स्थापना की। उसके पश्चात् यहाँ मिशनरियों का कार्य प्रारम्भ हुआ। किन्तु उस समय नागपुर वाले "प्रगतिशील" तथा "उदारबादी" नहीं, "दकियानूसी" थे। एक मिशनरी मिस्टर वॉस की उन्होंने अच्छी पिटाई की तो इस कारण मिशनरी कुछ दब गए। किन्तु सन् १८५४ के पश्चात् उनका हौसला बढ़ा। फिर भी इस नए क्षेत्र में अपना शासन मजबूत होने तक अंग्रेज कोई भी नया बखेड़ मोल लेना नहीं चाहते थे। इस कारण १८८९ तक स्थानीय स्तर पर ईसाइयों के अस्तित्व की अनुभूति नहीं होती थी।

भोंसले विद्वत्ता तथा शास्त्रकला के आश्रयदाता थे। उनकी यह कीर्ति नागपुर के बाहर भी फैली हुई थी। इस कारण बाहर से भी अच्छे लोग नागपुर की तरफ आकृष्ट होते थे। तेलंगाना से उन दिनों कई विद्वान तैलंग ब्राह्मण नागपुर प्रदेश में आकर बसे। ज्ञानकोशकार डॉ॰ श्रीधर व्यंकटेश केतकर ने लिखा है कि तैलंग ब्राह्मण प्रकृत्या क्रोधी थे; किन्तु भोंसलेशाही में सामाजिक सामंजस्य का वायुमण्डल इतना प्रभावी था कि ये "परदेशी/ब्राह्मण आसानी से स्थानीय जनता में घुलमिल गए। अंग्रेजी शासन में पश्चिम महाराष्ट्र से भी नौकरियों के लिए ब्राह्मण लोग नागपुर आए। वे स्थानीय जनता में घुलमिल न जाएं, यह चिन्ता अंग्रेजों को थी। अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार उस समय विशेष रूप से दो जातियों— ब्राह्मण तथा चान्द्रसेनीय कायस्थों— में था। इसलिए नौकरियों में इनका प्रमुख स्थान था। अंग्रेजों ने सूक्ष्म पद्धति से स्थानीय तथा बाहर के लोगों के मन में अलगाव की भावना पैदा की। पश्चिम महाराष्ट्र से आए कोकणस्थ ब्राह्मणों के मन में यह भाव जागृत किया गया कि वे स्थानीय लोगों से श्रेष्ठ हैं, इसीलिए तो बाहर से आकर वे प्रशासनिक पद संभाल रहे हैं। स्थानीय ब्राह्मणों के मन में यह भाव जागृत किया गया कि स्थानीय नौकरियों पर वास्तव में स्थानीय लोगों का ही अधिकार है। ये कोंकणस्थ लोग बाहर से आकर उनके अधिकार पर आक्रमण कर रहे हैं। भोंसलेशाही का सामाजिक समरसता का वायुमण्डल और अंग्रेजों की नीति के कारण निर्माण होने वाले विभेद में कितना अन्तर था, यह तैलंग ब्राह्मणों तथा कोकणस्थ ब्राह्मणों के उदाहरण से स्पष्ट होता है।

"ब्राह्मण"शब्द जातिवाचक है। किन्तु ब्रिटिश प्रशासन पद्धति की विशेषता ने जनमानस में "ब्राह्मण" की प्रतिमा को अधिक विस्तृत कर दिया। उस प्रतिमा

में ऐसी भी कुछ अब्राह्मण जातियां शामिल की गईं जिनके पास जीविकोपार्जन के लिए न तो पर्याप्त जमीन थी और न ही कोई धनोत्पादक अनुवांशिक धंधा था। इन जातियों की संख्या बहुत थोड़ी थी। आजकल ऐसे लोगों को मध्यम वर्गीय कहा जाता है। उन दिनों 'मध्यमवर्ग' संज्ञा प्रचलित नहीं थी। यद्यपि वर्ग के रूप में मध्यमवर्ग का उदय हो रहा था। वह समाज की एक अलग इकाई बन गया था। अस्पष्टता के इस संधिकाल में जनमानस में ब्राह्मण और मध्यमवर्ग का पृथक बोध होता था। यह वर्ग सुशिक्षित था, जाग्रत था और इनमें से कुछ लोग ऊँचे पदों पर थे। इस कारण ऐसा प्रतीत होने लगा था कि यही वर्ग जाग्रत नागपुर का प्रतिनिधि और नेता है। इस वर्ग का वायुमण्डल अर्थात नागपुर का वायुमण्डल; इनकी गतिविधियाँ अर्थात् नागपुर की गतिविधियाँ मानी जाने लगी थीं। साहित्यकार जब नागपुर के मानस के बारे में लिखते थे तब उनके मन में यह मध्यमवर्गीय मानस ही रहता था।

डॉक्टर केतकर ने नागपुर के मध्यमवर्ग का व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन, उसको प्रभावित करने वाले व्यक्ति, उनके विशिष्ट स्वभाव, जीवन-मूल्य और अंग्रेज अफसरों के पीछे चक्कर काटने वाले देशज लोगों की रीति-नीति आदि बातों का वास्तविक विवरण बहुत अच्छे तथा मनोरंजक ढंग से किया है। नागपुर का अध्ययन करने वाले सभी जिज्ञासुओं के लिए उस काल के मध्यमवर्ग पर लिखा उनका उपन्यास "गोंड वनांतील प्रियम्बदा" कादम्बरी कथा साहित्य होते हुए भी एक प्रामणिक सामाजिक दस्तावेज है। उसके कथानक का प्रारंभ सन् १८९३-९४ से होता है।

हाथ की उंगलियों पर गिनने लायक कुछ बंगाली परिवार भी प्रशासनिक कारणों से नागपुर में थे। यद्यपि माना जाता है कि उन दिनों नागपुर "पूर्व दृष्टि" (छत्तीसगढ़, छोटानागपुर, उड़ीसा और बंगाल) था।

नए प्रशासन के लिए नई तरह के लोगों की आवश्यकता थी। प्रशासन की सुविधा एवं लोगों के अंग्रेजीकरण की दृष्टि से संस्कृत विद्या का स्थान अंग्रेजी को देना आवश्यक था। सन् १८५३ के बाद संस्कृत को योजना पूर्वक गौण स्थान दिया जाने लगा। सेंट्रल प्रविंसेज (मध्य प्रान्त) में अंग्रेजी शिक्षा का सूत्रपात सागर में हुआ। उसके बाद अंग्रेजी नागपुर में आई। सागर में आंग्ल विद्याभूषित पहले

सज्जन श्री कृष्णराव रिंगे थे। नागपुर में एम.ए. की परीक्षा सर्वप्रथम पास करने वाले विद्यार्थी श्री किनखेड़े को हाथी पर बिठाकर शोभा-यात्रा निकाली गई थी। कई जिला केन्द्रों में अंग्रेजी शिक्षा के केन्द्र खोले गए। यह सब होते हुए भी सन् १८८९ तक अंग्रेजीकरण में सफलता नगण्य ही थी। मध्य प्रान्त में सर्वप्रथम भारतीय कालेज में प्रिंसिपल के नाते काम करते समय श्री केशव गोपाल उपाख्य बापूजी तामन मॉरिस कालेज में परम्परागत हिन्दू वेशभूषा में ही रहते थे और नागपुर के पठिक वैदिकों में उनकी गिनती होती थी।

एक विद्वान साहित्यिक ने लिखा है कि अंग्रेजों ने देशजों को काले अंग्रेज बनाने के लिए अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का सूत्रपात किया। सामान्यजनों पर उनके संस्कारों का प्रभाव धीरे-धीरे बढ़ता गया। किन्तु अंग्रेजों के लिए अनपेक्षित बात यह हुई कि इसी शिक्षा प्रणाली से पश्चिम महाराष्ट्र में वासुदेव बलवन्त फड़के, रानडे, तिलक, गोखले, परांजपे आदि देशभक्त भी पैदा हुए। मध्यप्रान्त में भी यही हुआ। इस दृष्टि से मनश्चक्षु के सामने आने वाले प्रमुख व्यक्ति हैं दादासाहब खापर्डे, डॉ॰ मुंजे, लोकनायक अणे, तपस्वी बाबा साहब परांजपे, अच्युत बलवंत कोल्हटकर, डॉ॰ परांजपे, "हरिकिशोर"कार, पृथ्वीगीर गोसावी और श्यामराव दादा देशपाण्डे आदि। किन्तु यह सब पर्याप्त अंतराल के पश्चात् हुआ। सन् १८८९ तक इन देशभक्तों का सक्रिय जीवन आरंभ नहीं हुआ था। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ॰ हेडगेवारजी के जन्म के थोड़े ही साल पूर्व जिन महापुरुष के कार्यकलाप ने नागपुर प्रदेश को हिला दिया था, वे भी आंग्ल विद्याविभूषित थे; किन्तु वे नागपुर प्रदेश के नहीं थे। उनका नाम था अण्णा साहब पटवर्धन।

महापुरुष अण्णा साहब बहुमुखी प्रतिभा के धनी, कट्टर देशभक्त तथा अलौकिक व्यक्ति थे। उनका विचार था कि परकीय सत्ता के विरोध में कोई भी षड्यंत्र तब तक सफल नहीं हो सकता था जब तक कोई न कोई, छोटा-सा ही क्यों न हो, भूप्रदेश पूर्णरूपेण षड्यंत्रकारियों के कब्जे में न हो। उनके अनेक विश्वासपात्र साथियों का यह विचार एक अव्यवहारिक दिवास्वप्न मात्र प्रतीत होता था; किन्तु अण्णा साहब निराश नहीं थे। वे सोचते थे कि अनुकूल स्थिति कभी-न-कभी आ सकती है।

सन् १८५३ में अंग्रेजों का कर्जा वापस करने में निजाम की असमर्थता के कारण लार्ड डलहौजी ने कर्ज के पैसों की एवज में निजाम का विदर्भ प्रदेश अंग्रेजी राज में शामिल कर लिया था। सन् १८५७ में निजाम की अंग्रेज निष्ठा के पारितोषिक के रूप में दक्षिण विदर्भ उनको वापस किया गया। उत्तर विदर्भ सन् १९०३ तक अंग्रेजों के हाथों में था। सन् १८८० में अण्णा साहब को खबर मिली की निजाम के दीवान सालारजंग के मन में अंग्रेजों के विषय में अप्रीति है और वे अंग्रेजों के कब्जे से विदर्भ वापस लेना चाहते हैं; किन्तु अर्थाभाव के कारण वे अपनी इच्छा पूरी नहीं कर सकते थे। अण्णा साहब ने अपने वकीलों के माध्यम से सालारजंग के सामने एक योजना रखी की कर्जे कि पूरी राशि अण्णा साहब हैदराबाद की फ्रेंच बैंक में जमा करेंगे, सालारजंग यह पैसा देकर अंग्रेजों से विदर्भ वापस लेंगे और फिर उसे अण्णा साहब को सौंप देंगे, इस तरह विदर्भ को खरीदने की योजना थी।

यह योजना सुनकर सालारजंग दंग रह गए। उनके सामने प्रश्न यह था कि क्या कोई एक व्यक्ति इस तरह प्रदेश को खरीदने की हैसियत रख सकता है? साथ ही यह विचार भी आया कि इसके परिणामस्वरूप विदर्भ अंग्रेजों से वापस लेने की उनकी इच्छा पूरी हो सकती है। किन्तु उनको भी यह एक दिवास्वप्न प्रतीत हुआ कि क्या एक सामान्य व्यक्ति वास्तव में इतनी बड़ी रकम जमा कर सकेगा। फिर भी यह सोचा कि इस दृष्टि से अण्णा साहब की परीक्षा करके देखनी चाहिए। यदि वे परीक्षा में पास होते हैं तो अगला कदम उठाया जाएगा। सालारजंग को लगता था कि इस परीक्षा में अण्णा साहब के पास होने की कोई भी संभावना नहीं है। उन्होंने अण्णा साहब के वकीलों को कहा कि पहले उनके मालिक सालारजंग को एक दिन के लिए दो करोड़ रुपए देने का काम तुरंत करके दिखाएं, बाद में बातचीत होगी। सालारजंग तब खुद पर विश्वास नहीं कर सके जब अण्णा साहब के वकीलों ने नियत समय के अन्दर दो करोड़ रुपयों की धनराशि उनके सामने रख दी। यह एक अभूतपूर्व घटना थी। सालारजंग के मन में अण्णा साहब के विषय में विश्वास निर्माण हुआ और वे अगली बात करने के लिए तैयार हो गए। सन् १८८० के अक्तूबर में सालारजंग ने संदेश दिया कि इस योजना को वे मोटेतौर पर स्वीकार करते हैं। इसकी तफसील और इसे बारीकी के साथ तय करने के लिए पहले दोनों की गुप्त बैठक यथाशीघ्र हो। ऐसा सोचा गया कि अण्णा साहब के मद्रास से वापस आते समय यह मुलाकात हो सकती है। किन्तु नियति

का विचार कुछ और ही था। अण्णा साहब मद्रास में ही थे तभी उनको यह समाचार मिला कि सालारजंग की मृत्यु हो गई। इस बज्राघात को उस महर्षि ने किस तरह सहन किया होगा यह सोच पाना कठिन है। किन्तु एक कठोर वास्तविकता सामने आई कि एक ओर यह महान योजना असफल हुई और दूसरी ओर इस बड़ी राशि का बड़ा ब्याज वापस लौटाने का काम अण्णा साहब को जीवन के अन्त तक करना पड़ा। लेकिन "दन्तच्छेदो हि नागानाम् श्लाध्यो गिरिविदारणे"।

योजना तो असफल हो गई; किन्तु उसकी वार्ता धीरे-धीरे बाहर फैलते ही नागपुर प्रदेश के जनमानस में बिजली की तरह एक लहर सी दौड़ गई।

वैसे भी नागपुर के लोग बहादुरी के कद्रदान रहे हैं। पारतंत्र्य आने के पश्चात् भी उनके पुराने मर्दाना शौक कायम रहे। वायुमण्डल में कुश्ती, मल्लखम्ब, दण्डपट्टा आदि का प्रभाव बना रहा। सन् १८५७ में ही आयुध अधिनियम (आर्म्स एक्ट) लागू किया गया था। सन् १८७८ में उसका पुनर्नवीकरण भी हुआ। फिर भी नागपुर वालों ने दण्ड, खड्ग, शूल आदि की शिक्षा जारी रखी। शिक्षा के समय असली और नकली, दोनों प्रकार के शास्त्रों का प्रयोग होता था। विजयादशमी का शस्त्रपूजन तथा सीमोल्लंघन पूर्ववत् जारी रहा। शस्त्रों का संग्रह तथा शस्त्र विद्या में नैपुण्य की बातें सराहनीय मानी जाती थीं। साधना के नाते नैपुण्य प्राप्त करने वाले कुछ लोग नागपुर में थे। श्री दामोदर बलवन्त उपाख्य भिड़े भटजी इस प्रकार के साधकों में से एक थे। आगे चलकर उन्होंने ही श्री अण्णा सोहनी को दण्ड के युद्धयोग की शिक्षा दी। मतलब यह कि वायुमण्डल पर प्रभाव नजाकत का नहीं था, शस्त्रादि विद्या की तेजस्विता का था। इसी कारण डॉ॰ मुंजे जैसे व्यक्ति को नागपुर में आराम से रहते हुए पैसा कमाने के बजाय बोअर युद्ध में जाने की इच्छा हुई।

पिछली शताब्दी में विभिन्न विचारधाराओं तथा कार्यप्रणालियों का देश में उदय हुआ, उन सबकी बातें और विचार नागपुर की जनता तक पहुँचते रहते थे। उस समय राजनीतिक दृष्टि से दूरगामी परिणाम करने वाली घटना थी इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना। किन्तु इस घटना ने नागपुर के जनसाधारण के मन में उस उत्सुकता या आत्मीयता के भाव का निर्माण नहीं किया जो इसके पूर्ण उमाजी नाईक के विद्रोह, अठारह सौ सत्तावन के स्वातंत्र्य समर, गोभक्त रामसिंह

कूका या डावरे के आत्मबलिदान, चापेकर बंधुओं के होतात्म्य और वासुदेव बलवंत फड़के के साहस ने किया था। साधारण आदमी ने कांग्रेस की स्थापना की ओर ध्यान नहीं दिया। परन्तु सुशिक्षित मध्यमवर्ग में कुछ जिज्ञासा जाग्रत हुई। यह भावना मध्यमवर्गीयों के मन में पहले से ही थी कि कुछ न कुछ सार्वजनिक कार्य करना चाहिए। उनमें से श्री बोस आदि दो-चार व्यक्ति कलकत्ता में हुए कांग्रेस के दूसरे अधिवेशन में गए और वहाँ से वापस आने के बाद उन्होंने थोड़ा-बहुत कार्य शुरू किया। इसके पश्चात् पुणे की 'सार्वजनिक सभा' का अनुकरण करते हुए 'लोक सभा' नामक संस्था इन्हीं सुशिक्षित लोगों ने आरम्भ की; किन्तु वह अधिक दिनों तक चल नहीं सकी। लेकिन कांग्रेस का कार्य कुछ थोड़े से सुशिक्षितों ने जारी रखा। उसका दायरा बहुत सीमित था और मध्यवर्गीयों में से भी केवल उच्च श्रेणी के लोग उस कार्य में उत्साह दिखाते थे। कांग्रेस का सातवां अधिवेशन सन् १८९१ में नागपुर (लालबाग) में हुआ। उसकी अध्यक्षता श्री पी. आनन्दाचार्लू ने की। इसी वर्ग विशेष में कांग्रेस का कार्य आगे भी चलता रहा। नागपुर के साधारण नागरिकों के मन में वह इसलिए जड़ नहीं जमा पाया कि उस कार्य का स्वरूप नागपुर के स्वभाव के अनुकूल नहीं था। उन दिनों कांग्रेस कितनी "शाकाहारी" संस्था थी इसका यहां एक ही उदाहरण प्रस्तुत करना पर्याप्त होगा। सर शंकरन् नायर की अध्यक्षता में सन् १८९७ में अमरावती में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। स्वयं दादा साहब खापर्डे उसके स्वागताध्यक्ष थे, तो भी अधिवेशन में तिलक जी की रिहाई की मांग करने वाला प्रस्ताव पारित नहीं हो सका। इतना ही नहीं, अधिवेशन के सभामंडप में तिलक जी का चित्र लगाने का कुछ युवकों का प्रयास भी सफल नहीं हो सका। जबकि वास्तविकता यह है कि कांग्रेस को लोकाभिमुख करने का कार्य लोकमान्य तिलक ने ही किया था। तिलक जी ने श्री शिवरामपंत परांजपे के "काल" पत्र और आगे उससे भी अधिक मात्रा में जन-जागृति का कार्य "केसरी" के माध्यम से किया था। सम्पूर्ण मराठी भाषी क्षेत्र में राष्ट्रीय चेतना और "केसरी" शब्द पर्यायवाची माने जाते थे। देश के क्षितिज पर दो दशकीय "तिलक युग" का उदय ४ जुलाई, १८९९ के तिलक जी के केसरी में प्रकाशित "पुनश्च हरि:ओम्" लेख से हुआ था। किन्तु कांग्रेस पर तिलक जी की विचारधारा का प्रभाव प्रस्थापित होने में अभी कई वर्ष बाकी थे।

ब्रिटिश कालखण्ड में जो नई विचारधाराएँ तथा कार्यप्रणालियाँ निर्माण हुई

उन सबको मिलाकर कुछ विचारक "नवजागरण" संज्ञा का प्रयोग करते हैं। इनमें सन् १८८९ थियोसाफिकल सोसायटी का नाम तक नागपुर प्रदेश तक पहुँचने का सवाल ही नहीं उठता। ब्रह्म समाज की चर्चा शेष देश के सुशिक्षित लोगों में बहुत थी। राजा राजमोहन राय, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, केशवचंद्र सेन तथा ईश्वरचंद्र विद्यासागर आदि महापुरुषों के नाम तथा कार्य से नागपुर अवश्य परिचित था। किन्तु यहाँ ब्रह्म समाज की संस्था के नाते चर्चा नहीं थी, महापुरुष के नाते यहां स्वामी रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानंद की चर्चा थी, किन्तु कार्यप्रणाली के नाते नहीं।

स्वामी दयानन्द नागपुर आए थे। उनका यहाँ निवास-प्रवास प्रेरणादायक रहा। उसके परिणामस्वरूप आर्य समाज का कार्य तुरन्त आरम्भ नहीं हुआ तो भी स्वामीजी की प्रेरणा से नागपुर में उसी वर्ष "गोरक्षण सभा" का निर्माण हुआ, जिसकी १८८५ के अन्त तक मध्य प्रान्त और बरार में ४९ शाखाएँ खुल गई थीं। सर नारायणराव चन्दावरकर आदि के प्रार्थना समाज का नागपुर में तब तक केवल नाम पहुँचा था। पश्चिम महाराष्ट्र में लोकहितवादी रा.ब. गोपालहरि देशमुख से लेकर महात्मा ज्योतिबा फुले तक सामाजिक सुधार का जो प्रथम अध्याय प्रारम्भ हुआ था, उसकी समाप्ति महात्मा फुले की मृत्यु के साथ हुई। (महात्मा फुले की निर्वाण शताब्दी और संघ संस्थापक डॉ॰ हेडगेवार जी की जन्म-शताब्दी नजदीक-नजदीक ही आई थी) इस समाज सुधार आन्दोलन की चर्चा नागपुर प्रदेश में भी उन दिनों चलती थी; किन्तु चर्चा में रूचि लेने वालों की संख्या उच्च शिक्षित मध्यमवर्गीय लोगों तक ही सीमित थी।

महात्मा फुले प्रणीत सत्यशोधक समाज का कार्य उस समय तक पश्चिम महाराष्ट्र में काफी बढ़ चुका था। किन्तु इस आन्दोलन की विशेषता यह रही कि यह सभी मराठी भाषी लोगों के लिए था तो भी महात्मा फुले की मृत्यु तक तथा उसके पश्चात् भी इसका विस्तार केवल उन्हीं मराठी भाषी इलाकों तक ही सीमित रहा जो प्रत्यक्ष रूप से ब्राह्मण पेशवाओं के अधिकार में थे। भोंसलों या निजाम के अधिकार क्षेत्र में आने वाले मराठी भाषी इलाकों में सत्यशोधक आन्दोलन तब तक प्रवेश नहीं कर सका था।

अंग्रेजों ने जातीयता के आधार पर फूट डालने का काम दूसरे ढंग से शुरू किया। पश्चिम महाराष्ट्र में ब्राह्मण पेशवा राज्यकर्ता थे इसलिए उधर ब्राह्मण विरोधी

वायुमण्डल बनाना आसान था। भोंसलों की सर्वसमावेशक नीति के कारण प्रजाजनों में सामंजस्य का वायुमण्डल था। भोंसले परिवार के विषय में सभी लोगों के मन में आत्मीयता का भाव था। अंग्रेजी शासन स्थापित होने के कई दशक बाद डॉ॰ मुंजे के पिताजी उन्हें कहते थे, "तात्या! खून कहीं भी कमा लेना, लेकिन याद रखना, तेरी हड्डी भोंसलों की है।" संघ संस्थापक डॉक्टर हेडगेवारजी कोभी शैशवावस्था में सारा वायुमण्डल देखकर ऐसा लगता था कि नागपुर में अब भी भोंसलों का ही शासन है। भोंसलों की इस लोकप्रियता को ध्यान में रखकर अंग्रेजों ने यह चर्चा शुरू की कि भोंसलों का राज नष्ट होने के लिए ब्राह्मण ही जिम्मेदार थे। उन्होंने ही राजा को धोखा दिया। वास्तव में यह कथन ऐतिहासिक सत्य के एकदम विपरीत था। ऐसे झूठे प्रचार का परिणाम उन लोगों पर होना संभव नहीं था जो स्वयं या जिनके पिता-चाचा आदि उस ऐतिहासिक घटना के प्रत्यक्षदर्शी थे। किन्तु ऐसे लोगों के इहलोक से परलोक चले जाने के बाद अंग्रेजों का ब्राह्मण विरोधी गलत प्रचार बल पकड़ने लगा। इसके आधार पर लोककथाएं, लोकगीत बनाए गए। नूमने के तौर पर यह पंक्ति देखिए— 'बड़े-बड़े हाथी थे रघु जी के पास। लेकिन कढ़ी खाऊ बमनों ने डुबा दिया राज"। लेकिन यह सब बहुत समय के पश्चात् हुआ। पिछली शताब्दी के लगभग अन्त तक ऐतिहासिक वास्तविकताओं की जानकारी लोगों में थी, इस कारण यह विघटनकारी प्रचार सन् १८८९ तक प्रभावी नहीं हुआ था। परन्तु विषवल्लरी का बीजारोपण तो हो चुका था और उसका अंकुर फूटने तथा उसको वृक्ष में विकसित होते हुए देखने का काम आने वाली पीढ़ियों को करना था।

सन् १८८९ की वर्ष प्रतिपदा के सूर्योदय के शुभमुहुर्त पर नागपुर में जब केशव बलिराम हेडगेवार के रूप में "नवभारत की संकेत रेखा" प्रकट हुई, उस समय नागपुर की यह स्थिति थी।

२. तिलक युग

डॉक्टरजी के संस्कार-क्षम अन्तर्मन पर गहरा परिणाम करने वाले तिलक युग का स्वागत दो प्राकृतिक प्रकोपों ने किया– पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में मुंबई प्रेसिडेन्सी में प्रादुर्भूत भीषण अकाल जिसमें सत्तर हजार वर्गमील प्रदेश के दो करोड़ लोग प्रभावित हुए और उस अवधि तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में

जगह-जगह फैले हुए प्लेग का भीषण उपद्रव। नागपुर प्रदेश भी इन नैसर्गिक आपदाओं से संत्रस्त था। ऐसे समय में सरकार द्वारा निर्लज्जतापूर्वक इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया के राज्यारोहण की हीरक जयन्ती का समारोह सम्पन्न कराया गया, जिससे सर्वसाधारण जनता को भी साम्राज्य-सत्ता की अमानुष उदासीनता तथा अत्याचारी वृत्ति का पता चला। इसकी प्रतिक्रियास्वरूप पूना में रैंड साहब का वध हुआ था। इस पृष्ठभूमि में नागपुर प्रदेश की जनता को स्वराज्य- भोंसलों के सर्वजन सुखाय कारोबार- का उत्कटता से स्मरण होना स्वाभाविक था। छत्रपति शिवाजी का आदर्श जनमानस में फिर से प्रज्ज्वलित होना इसका सहज परिणाम था।

वैसे तो १८८५ में ही इंडियन नेशनल कॉंग्रेस की स्थापना हुई थी; किन्तु जैसा कि इसके पूर्व बताया गया है कि नागपुर के लोग हमेशा बहादुरी के कद्रदान रहे है। सन् १९०७ तक की कॉंग्रेस शाकाहारी थी। उसका प्रभाव नागपुर के युवकों के मन पर बिल्कुल नहीं था। उमाजी नाईक, यवतमालके दत्या-मोहन्या तथा तण्ट्या भिल्ल का विद्रोह, अट्ठारह सौ सत्तावन का स्वातंत्र्य संग्राम, चाफेकर बंधुओं का हौतात्म्य, वासुदेव बलवंत फडके का साहस, डावरे का आत्मबलिदान आदि बातें युवकों को अधिक प्रभावित करती थीं। देश के क्षितिज पर 'तिलक युग का उदय ४ जुलाई, १८९९ के तिलकजी के 'केसरी' में प्रकाशित "पुनश्च हरि: ओम्" लेख से हुआ। पूज्य डॉक्टरजी के मन पर जन्म से ही तिलक युग के संस्कार अंकित होते गये। उन दिनों देशभक्ति की प्रेरणा देने वाली घटनाओं को प्रसिद्धि न मिले, यह सतर्कता अंग्रेज सरकार बरतती थी तो भी बाबासाहेब नरगुंदकर भावे की फाँसी, कित्तूर की महारानी चेन्नम्मा का वीरमरण, रावसाहेब पेशवा की फाँसी, गोभक्त रामसिंह कूका का ब्रह्मदेश के कारावास में निधन आदि घटनाएं रिसते-रिसते, (फिल्टर) नागपुर तक पहुँचती ही थीं। सन् १९०० से क्रान्ति कार्य में सावरकर युग का प्रारंभ हुआ। अनन्तलक्ष्मण कान्हेरे, मदनलाल धींगरा, अवध बिहारी, गोविन्द लाल, अमीरचंद हुकुमचंद, साराभाई बागी, करतारसिंह, सोहनलाल पाठक, भाई बंटा सिंह, सूफी अंबाप्रसाद आदि क्रांतिकारियों के विषय में नागपुर के युवकों के मन में आदर की भावना रहती थी। ये तेजस्वी गतिविधियां युवकों के मन पर तेजस्वी संस्कार करती थीं उनमें से कुछ प्रमुख घटनाएँ विशेष उल्लेखनीय है।

— दि. ६ दिसम्बर १९०७ को बंगाल के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर की ट्रेन को उड़ा देने का प्रयास हुआ।

— दि. २३ दिसम्बर, १९०७ को ढाका के भूतपूर्व डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट एलन को गोली से खत्म करने का असफल प्रयास किया गया।

— दि. ३० अप्रैल, १९०८ को प्रेसीडेन्सी मैजिस्ट्रेट किंग्जफोर्ड प्रफुल्ल चाकी तथा खुदीराम बोस द्वारा बम फेंका गया जिसके कारण श्रीमती तथा कुमारी कैनेडी की मृत्यु हुई।

— मई, १९०८ में माणिकतल्ला बम केस, उससे पश्चात् ढाका, फरीदपुर मैमनसिंग तथा बाकरगंज क्षेत्रों में क्रान्तिकारी घटनाएँ।

— दि. १ नवम्बर, १९०९ को लॉर्ड तथा लेडी मिन्टो पर अहमदाबाद शहर में बम फेंका गया।

— श्री वी.वी.एस. अय्यर तथा तिरूमल आचार्य के नेतृत्व में पांडिच्चेरी में क्रांतिकारी गतिविधियाँ।

— दि. १७ जून, १९११ को तिनेवेली डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट एशे पर बंची अय्यर ने गोलियां चलाई (तिनेवेली कांस्पिरेसी केस)।

— दि. २२ दिसम्बर, १९१२ को दिल्ली के चाँदनी चौक में रासबिहारी बोस ने लॉर्ड हार्डिंग पर बम फेंका (दिल्ली कांस्पिरेसी केस)

— कनाडा के भारतीय विरोधी कानून के विरोध में सन् १९१४ का कनाडा के बाबा गुरुदित्ता सिंह का सुप्रसिद्ध "कामा गाटा मारू" (जापानी जहाज) प्रकरण जिसकी समाप्ति मेवा सिंह द्वारा कनाडा के इमिग्रेशन ऑफिस (उत्प्रवास कार्यालय) प्रमुख हॉपकिन्स की हत्या से हुई।

— यूनाइटेड स्टेट्स (अमरीका) के पश्चिम किनारे पर बसे हुए भारतीयों को संगठित करने का तारकनाथ दास तथा सोहन सिंह भाकना का प्रयास- उसी में से सनफ्रॉन्सिस्को में मध्य अमरीका और अतिपूर्व में 'गदर पार्टी' की स्थापना।

— दि. २१ जनवरी, १९१५ को अखिल भारतीय विद्रोह की 'गदर पार्टी' की असफल योजना– बागी करतार सिंह, भाई परमानन्द, गणेश पिंगले, जगत

सिंह तथा हरनाम सिंह के संचालकत्व में— जिसकी समाप्ति (अन्य सभी साथियों को फांसी तथा कालेपानी के पश्चात्) दि. १६ नवम्बर १९१५ को गणेश पिंगले की फांसी से हुई।

— इसी अवधि में नागपुर प्रांत के चन्द्रपुर विभाग में बापूराव गोंड तथा व्यंकटराव गोंडने किया हुआ सशस्त्र प्रयास।

— श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा तथा मैडम कामा द्वारा भारत की स्वतंत्रता के विषय में किया गया प्रभावी प्रचार।

— सिंगापुर में जमादार चिस्तीखां तथा सूबेदार दण्डेखां के नेतृत्व में ५वीं लाइट इन्फेक्ट्री के ७०० जवानों का विद्रोह।

— दि. १० सितम्बर, १९१५ में बाघा जतीन (जतीन्द्रनाथ मुखर्जी) द्वारा अपने चार साथियों के साथ सशस्त्र पुलिस की बटालियन से बालासोर (उड़ीसा) के जंगल में हुई संस्मरणीय लड़ाई।

— प्रथम महायुद्ध के कालखंड में 'गदर' पार्टी के तत्वावधान में विदेश में हुआ क्रान्तिकार्य, "गदर पार्टी" के सूत्रधार लाला हरदयाल, राजा महेन्द्र प्रताप, भाई परमानंद, डॉ॰ खानखोजे, पं. रामचंद्र, पं. काशीराम, सरदार अजीत सिंह, रासबिहारी बोस, मानवेन्द्रनाथ रॉय, वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय, चंपक रमण पिल्ले, बरकतुल्ला, तारकनाथदास आदि ने अंग्रेजों के शत्रु देशों की सहायता से चलाया गया स्वराज्य का प्रयास।

— लोग समझते थे कि उन दिनों अंग्रेजों के विरोध में वनवासियों तथा किसानों के जितने सशस्त्र संघर्ष हुए उनका अंतिम उद्देश्य अंग्रेजों को हटाना ही था।

— अशफाक उल्ला खान (१९-१२-१९२७), चंद्रशेखर आजाद (२७-२-१९३१), सूर्यसेन (१४-१-१९३४), चम्पकरमण पिल्ले (१६-५-१९३४) के आत्म बलिदानी उदाहरण।

— डॉक्टरजी की मृत्यु के समय सरदार उधमसिंह और एम.आर. आनन्दन् कारागार में मृत्यु की प्रतीक्षा में अपना समय बीता रहे थे।)

उन दिनों बाहर के कुछ क्रान्तिकारी नेता भी नागपुर वालों से संबंध रखते थे। 'हिन्दुस्थान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' के वाराणसी के कार्यकर्ता श्री राम

सावरगावकर, सेनापति बापट, ग्वालियर के गजानन सरपोद्दार, चन्द्रशेखर आजाद की माताजी का ऊर्ध्व कर्म उनके पुत्र के समान करने वाले सदाशिवराव मलकापूरकर एवं रासबिहारी बोस के जापान जाने के पश्चात् वाराणसी में उनका कार्य संभालने वाले नागपुर के नजदीक के तलेगांव के विनायकराव कपले आदि का नागपुर के युवकों के साथ समय-समय पर सम्पर्क रहता था। इन सब बातों के फलस्वरूप देशभक्तिपूर्ण तेजस्वी मानसिकता नागपुर के जिन युवकों की रहती थी उन युवकों में युवा केशवराव का प्रमुख स्थान था।

उन दिनों देशभक्त पत्रकारों ने राष्ट्रीय जागरण की दिशा में बहुत बड़ा योगदान किया था। "केसरी", "काल" तथा "देश सेवक" समाचार पत्र नागपुर प्रदेश में जागृति उत्पन्न कर रहे थे। पत्रकार के नाते तिलकजी, शिवराम महादेव परांजपे, "बिहारी" के तीन सम्पादक, मुम्बई के "हिन्द स्वराज्य" के दो सम्पादक, मुम्बई के "राष्ट्र मुख" के बा.रा. पालवणकर, कोल्हापुर के "विश्ववृत्त" के सम्पादक, उपसम्पादक, मुद्रक, मुम्बई के "अरुणोदय" के सम्पादक घोडोनाथ फड़के आदि पत्रकारों को सरकार द्वारा दी गई कारावास की सजाएँ यहाँ की जनता को उत्तेजित करती थीं। "अभिनव भारत समाज" के संस्थापक श्री गणेश दामोदर सावरकर द्वारा अप्रैल, १९०७ में "मैजिनी" के मराठी भाषान्तर की बीस हजार प्रतियों के वितरण के अलावा स्वातंत्र्य वीर सावरकर की "भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम", "जोन ऑफ आर्क" आदि कृतियां सावरकर के गीत तथा पोवाड़े, अंडमान से भेजे हुए पत्र तथा उनकी कविताएं, नासिक के कवि गोविन्द की कविताएं, सखाराम गणेश देउसकर की "देशेर कथा" सन् १९०३ के अन्त में हिन्दुस्तान रिव्यु के अंक में 'शस्त्र को आह्वान" "A Call To Arms" (ए कॉल टु आर्मस) शीर्षक से छपा लेख, ह्यूम, बेडरबर्न, दादाभाई नौरोजी और ड्ब्ल्यू, सी. बनर्जी के कांग्रेस आन्दोलन की विफलता पर प्रकाश डालने वाले लेख, बंकिमचन्द्र का "आनंदमठ" उपन्यास, श्री समर्थ रामदास का "दासबोध" (इटली में पैदा हुए रामदास को "मैजिनी" कहते है और हिन्दुस्थान में पैदा हुए को रामदास कहते हैं, इतिसावरकर), दादाभाई नौरोजी, आर.सी. दत्त तथा दिन्शा बाच्छा द्वारा प्रकाशित "इंग्लैण्ड द्वारा भारत के भीषण आर्थिक शोषण का चित्र", तिलक जी का "गीता रहस्य"— विशेषकर उसका 'किं कर्म किम-कर्मेति' वाला दूसरा अध्याय आदि साहित्य युवकों को प्रेरणा प्रदान कर रहे थे।

इनके अलावा स्वामी विवेकानंद के भाषणों के ग्रंथ, योगी अरविंद के अग्रलेख, श्यामसुदर चक्रवर्ती का साहित्य, बंगाली क्रांतिकारियों की वीर गाथाएं, भाई परमानंद, स्वामी सत्यानंद तथा लाला हरदयाल का साहित्य, मैजिनी-गॅरिबाल्डी के नेतृत्व में हुए स्वातंत्र्य संग्राम का इतिहास, आयरलैण्ड के 'सिनफेन' आन्दोलन का वृत्त, इनके कारण भी युवकों को उचित प्रेरणा मिलती थी।

उन दिनों के जनमानस की एक विशेषता अब, सिंहावलोकन करते समय, ध्यान में आती है। वस्तुत: सभी सुशिक्षित लोगों को अमेरिका का स्वातंत्र्य युद्ध, फ्रान्स की राज्यक्रांति, इंग्लैण्ड की ग्लोरियस क्रान्ति रूसी क्रान्ति राज्य क्रान्ति आदि सभी क्रांतियों का इतिहास अवगत था; तो भी कट्टर राष्ट्रवादी लोगों को विशेष आकर्षण आयरलैण्ड और इटली के स्वातंत्र्य संघर्ष का ही था। (मौलिक ग्रंथ हिन्दुत्व डॉ॰ नारायणराव सावरकर कृत हिन्दू विश्वविजय का इतिहास, "किम् राष्ट्रम् कस्य राष्ट्रम्" प्रबंध, रा.बा. मावकर के 'सावधान' का प्रखर हिन्दुत्व लेखन तथा टेरेन्स मॅकस्विनी का 'फंडामेन्टल्स ऑफ फ्रीडम', "Fundamentals of Freedom" इत्यादि साहित्य बाद में निर्माण हुआ।)

आज के मुक्त वायुमंडल में जिनका जन्म हुआ वे कल्पना ही नहीं कर सकते कि उन दिनों जनमानस कितना आतंकित रहता था और यह मन:स्थिति दूर करने के लिये जनता तक उचित संदेश पहुंचाना कितना खतरनाक कार्य था। उन दिनों वातावरण निर्मिति का महत्व कितना था इसकी कल्पना आज की पीढ़ी के लोग नहीं कर सकते। इस तरह का कोई भी गंभीर साहित्य एकदम प्रक्षिप्त हो जाता था, इसलिये जनजागरण के लिये ललित साहित्य का उपयोग करना और उसके माध्यम से प्रकारांतर से, अप्रत्यक्ष रीति से तथा "ध्वनि" का उपयोग कर आवश्यक संदेश जनता तक पहुंचाने का मार्ग अपरिहार्य हो गया था। बाद में यह तरकीब सरकार के ध्यान में आई —विशेष रूप से "कीचक वध" नाटक के प्रयोगों के पश्चात्। किन्तु इस तरह के ललित साहित्य को प्रक्षिप्त करना कानून की चौखट के अन्तर्गत संभवनीय नहीं होता था। 'नाथमाधव' की 'स्वराज्य' की उपन्यास माला (शिवशाही) (आगे चलकर उसी तर्ज पर वि.वा. हडप की "कादंबरीमय पेशवाई") हरिनारायण आपटे की "उष:काल" तथा "वज्राघात", दुर्गाप्रसाद आसाराम तिवारी के "मराठ्यांची संग्रामगीते" तथा "झांशीची संग्राम देवता", पां.कृ. सावलापूरकर का 'चुकलेला इतिहास', आप्पासाहेब भोंसले का पोवाड़ा,

'श्रद्धानन्द पत्र', तात्या टोपे का अन्तिम वक्तव्य, श्रीधर नारायण हुद्दारकी 'अभिनव ग्रंथ माला', चाफेकर बन्धुओं की माताजी का भगिनी निवेदिता के साथ हुआ संभाषण इत्यादि इस दृष्टि से प्रभावी कार्य कर रहे थे।

नागपुर प्रदेश में प्रारम्भ से ही बलोपासना का प्रचार रहा है। आगे चलकर उसका अविष्कार अण्णा खोत की "नागपुर व्यायामशाला" तथा दत्तोपंत मारूडकर की "भारत व्यायामशाला" के रूप में हुआ। बलोपासना की तीव्र लालसा उन दिनों युवकों को स्थान-स्थान पर अखाड़े तथा व्यायामशालाएँ संघटित करने के लिए प्रोत्साहित करती थी। आगे चलकर अमरावती के हनुमान व्यायाम प्रसारक मंडल के डॉ॰ शिवाजीराव पटवर्धन, अंबादासपंत वैद्य, असनारे, काणे, कोकर्डेकर ने भी इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया था। देशभक्तिपूर्ण कीर्तन, प्रवचन, भजन मण्डलियाँ और युवक मंडल गतिविधियां भी चलती रहती थी। तिलक जी द्वारा जनजागरण हेतु प्रारम्भ किए गए गणेश उत्सव, शिव जयन्ती उत्सव एवं रामनवमी आदि पर्वों पर सर्वश्री दादा साहब खापर्डे, बापूजी अणे, अच्युत बलवन्त कोलहटकर एवं तपस्वी बाबा साहब परांजपे आदि लोकाग्रणियों के भाषण युवकों के मन पर देशभक्ति के संस्कार अंकित करते थे।

इस इतस्तत: बिखरे हुए परिवेश का नागपुर में किसी एक स्थान पर केन्द्रीकरण होना आवश्यक था। अफ्रीका के बोअर युद्ध से वापस लौटने के बाद डॉ. बालकृष्ण शिवराम मुंजे ने इस आवश्यकता की पूर्ति की। उस समय विशेषत: विदेशों में स्थित प्रवासी भारतीयों की दशा से वे अतीव पीड़ित थे। उन्होंने अपनी यह वेदना दिसम्बर, १९०५ के कांग्रेस अधिवेशन में प्रकट भी की थी। लोकमान्य तिलक जी से प्रेरणा प्राप्त करके उनके सभी उपक्रमों को नागपुर प्रदेश में लाने का काम डॉक्टर मुंजे ने किया और उन्होंने स्थानीय युवकों का सम्बन्ध बंगाल की अनुशीलन समिति के साथ जोड़ा।

सन् १८९६ में अडोबा की लड़ाई में अबिसिनिया द्वारा इटली की पराजय और उसके पश्चात् सन् १९०५ में जापान द्वारा यूरोपियन रूस का पराभव सभी श्वेतेतर लोगों के स्वाभिमान तथा आत्मविश्वास को जाग्रत करने वाला सिद्ध हुआ। इन घटनाओं के पश्चात् यूरोप में क्रांतिकारी सूत्रों द्वारा रूस तथा इटली के सम्राटों की हत्या, आस्ट्रिया की सम्राज्ञी एलिजाबेथ, स्पेन के प्रधानमंत्री, फ्रांस के राष्ट्रपति

कारनाट, रूस के गृहमंत्री तथा फिनलैंड के गर्वनर जनरल की राजनीतिक हत्याएं, २९ सितम्बर, १९०५ को अंग्रेज सरकार द्वारा बंगभग की घोषणा, "वंदेमातरम्" मंत्र का जागरण, अगले वर्ष कलकत्ता कांग्रेस में दादाभाई नौरोजी द्वारा "स्वराज्य" का समर्थन तथा इसमें स्वीकृत की गई, "स्वराज्य"' "स्वदेशी" "बहिष्कार'तथा "राष्ट्रीय शिक्षण" की चतुः सूत्री आदि घटनाओं का नागपुर के युवकों के मन पर बहुत प्रभाव पड़ा। इसी कारण कांग्रेस के १९०७ के सूरत के अधिवेशन में तिलक जी का समर्थन करने के लिए नागपुर के युवक बड़ी संख्या में वहाँ पहुँचे थे। कांग्रेस के मंच पर जब तिलक जी पर आक्रमण हुआ तो उस समय उनको संरक्षण देने के लिए मंच पर चढ़ने वालों में नागपुर के डॉ० मुंजे और डॉ. गद्रे भी थे। तिलकजी को सजा देकर मांडले जेल भेजे जाने के परिणामस्वरूप नागपुर का वायुमण्डल बहुत गरम हो गया था। तात्कालिक प्रतिक्रिया के रूप में विद्यार्थियों ने एक बहुत बड़ा जुलूस निकाला। प्रदर्शनकारी छात्रों ने मॉरिस कालेज पर पत्थरबाजी भी की। १९ अगस्त, १९०७ को व्यंकटेश थिएटर के सामने बहुत बड़ी सार्वजनिक निषेध सभा हुई। उसी वर्ष कस्तूरचन्द्र पार्क में औद्योगिक प्रदर्शनी लगी थी। उस अवधि में महाराज बाग में स्थित महारानी विक्टोरिया के पुतले को कोलतार पोतकर विद्रूप कर दिए जाने के आरोप में नारायण परांजपे को गिरफ्तार किया गया। बाद में अच्युत बलवन्त कोलहटकर को भी गिरफ्तार किया गया। इस तरह "तिलक युग" में नागपुर के देशभक्त युवक पूरे जोश के साथ तिलक जी का समर्थन करने के लिए कटिबद्ध थे। बाल-किशोर अवस्था लांघकर युवावस्था में प्रवेश करने जा रहे जन्मजात प्रखर देशभक्त केशव के मन पर इन सब घटनाओं का क्या परिणाम हुआ होगा, इसका अनुमान हम लगा सकते हैं।

अतः रिस्ले कमीशन के विरोध में नीलसिटी हाई स्कूल के विद्यार्थियों को संगठित कर वहां हड़ताल करना और आन्दोलन के अन्त में स्वयं अपनी भूमिका पर डटे रहने के कारण 'रस्टिकेशन' की सजा स्वीकार करना डॉक्टर जी की स्वाभाविक प्रवृत्ति का परिचय देने वाली घटना थी। समकालीन सभी राष्ट्रीय कार्यों में डॉक्टरजी बाल्यावस्था से ही सक्रिय थे। श्री नानापालकर तथा श्री बापूराव भिशीकर द्वारा लिखित डॉक्टरजी की जीवनियों में इसका विस्तृत विवरण उपलब्ध है।

किन्तु इन स्थानीय गतिविधियों से ही संतुष्ट रहना उनके स्वभाव के अनुकूल

नहीं था। बंगाल में चल रहे क्रांति कार्य को "युद्धस्य वार्ता रम्या" की तटस्थ वृत्ति से देखना उनके लिये संभव नहीं था। इधर अधिक चर्चा व प्रसिद्धि न करते हुए अपने अभिभावक नेता डॉ॰ मुंजेजी की सहायता से मेडिकल कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करने का निमित्त बनाकर डॉक्टरजी कलकत्ता पहुँचे, वहाँ क्रांतिकारी अनुशील समिति से सम्पर्क प्रस्थापित करने का प्रयास किया और वहां के अपने इधर के तथा बंगाल के सहपाठियों में राष्ट्रीय चेतना निर्माण करने का कार्य प्रारंभ किया। अनुशीलन समिति के एक ज्येष्ठ नेता श्री त्रैलोक्यनाथ चक्रवर्ती महाराज अपनी "जेल में तीन वर्ष" पुस्तक में लिखते हैं, कि "केशवराव के महाविद्यालय के ही एक छात्र श्री नलिनी किशोर गुह उनको तथा डॉ॰ नारायणराव सावरकर को अनुशीलन समिति में ले आये थे।" इस पुस्तक में श्री त्रैलोक्यनाथ चक्रवर्ती ने 'अनुशीलन समिति' के जिन प्रमुख लोगों के छायाचित्र दिये है उनमें डॉक्टरजी का छायाचित्र भी समाविष्ट है। यह स्पष्ट है कि अनुशीलन समिति के प्रमुख श्री पुलिन बिहारी दास तथा उनके अन्य सहयोगियों से डॉक्टरजी के घनिष्ठ संबंध थे। उन्हीं दिनों में श्री रामलाल वाजपेयी नामक क्रांतिकारी से डॉक्टरजी का परिचय हुआ।

बंगाल के उस समय के नेताओं में श्री श्यामसुंदर चक्रवर्ती और मौलवी लियाकत हुसैन के विषय में डॉक्टरजी के मन में विशेष आकर्षण था। श्री श्यामसुंदर चक्रवर्ती के भाषण तथा लिखित साहित्य का हिन्दी और मराठी में भावांतर होना चाहिये, ऐसी उनकी तीव्र इच्छा थी।

मौलवी लियाकत हुसैन का भाषण कहीं भी हो, उसे सुनने के लिये डॉक्टरजी अवश्य जाते थे। लियाकत हुसैन ने 'स्वदेशी भांडार' चलाया था। विदेशी टोपी के रूप में तुर्की टोपी का त्याग और भगवत् ध्वज का स्वीकार किया था।

बंगाली 'धन धान्य पुष्पे भरा' गीत सुनते समय डॉक्टरजी की आँखों से आँसू बहने लगते थे।

मित्र के नाते उधर के जो अनेक बंगाली विद्यार्थी उनके सहवास में आए। हावड़ा के डॉ॰ अमूल्यरत्न घोष उनमें प्रमुख थे। उनको 'हावराबाबू' नाम से डॉक्टरजी पुकारते थे।

डॉक्टरजी के साथ इधर के. वणी के डॉ॰ यादवराव अणे, चांदा के डॉ॰ शंकरराव वैद्य, मुंबई के डॉ॰ नारायणराव सावरकर तथा डॉ॰ शंकरराव नाईक (तेंडूलकर), नागपुर के गोपालराव देव तथा आर्वी के डॉ॰ (स.नि.) मोहरील आदि ये लोग थे। डॉक्टरजी को इन सबका स्मरण हमेशा होता था। सामान्य बातचीत में भी वे इन सभी का उल्लेख करते रहते थे।

आजकल हम जिसको 'सेवाभारती'' कहते है उसका वास्तविक प्रारंभ डॉक्टरजी के बंगाल के निवास में ही हुआ था। दामोदर नदी को बहुत बाढ़ आई। उस समय नदी के उस पार भूखे बैठे लोगों में वितरित करने के लिये "मुडी" (मुरमुरे) के बोरे पीठ पर बांधकर बाढ़ में तैरकर उस पार के भूखे लोगों में वितरित करने का साहसी कार्य डॉक्टरजी ने किया था। कलकत्ता से साठ मील दूर के गंगासागर की यात्रा में हैजे का (कॉलरा का) प्रकोप हुआ तो अपने मित्रों को साथ में लेकर डॉक्टरजी ने हैजाग्रस्त लोगों की सेवा-शुश्रुषा की। सन् १९१६ में नागपुर में प्लेग फैला। उससे पीड़ित लोगों की सेवा डॉक्टरजी ने खुद के प्राण खतरे में डालकर की। आज की 'सेवाभारती' का सच्चा प्रारंभ इन घटनाओं से हुआ है। इसलिये इन कार्यों में डॉक्टरजी का साथ देने वाले सभी मित्र हमारे लिये संस्मरणीय है।

बंगाल से वापस आने के बाद डॉक्टरजी ने नागपुर को केन्द्र बनाकर क्रांतिकार्य का विस्तार प्रारंभ किया। इस कार्य में उनके सबसे बड़े सहयोगी श्री भाऊजी कावर थे। वे केवल रक्तरंजित क्रांति में ही विश्वास रखते थे। वे डॉक्टरजी के अभिन्नहृदयी मित्र थे। भाऊजी के अलावा, क्रांतिकार्य के लिये उपयुक्त युवक प्राप्त हो इस उद्देश्य से माध्यम के नाते 'नागुपर व्यायामशाला' चलाने वाले अण्णा खोत, पिस्तौल आदि शस्त्रों की मरम्मत करने वाले दादासाहेब बक्षी, क्रांतिकार्य के लिये धन की सहायता करने वाले देशभक्त मालगुजार लोगों का 'नरेन्द्र मंडल'— जिसमें घोटीबाडी के समीउल्लाखान भी शामिल थे, गोवा से गुप्तरूप से शस्त्र ले आने के लिये डॉक्टरजी ने जिनको भेजा था वे नानासाहेब तेलंग, वैसे ही सन् १९१८ में समुद्री मार्ग से आने वाले शस्त्रास्त्रों का संग्रह गुप्त रूप से ले आने के लिये डॉक्टरजी ने जिनकी नियुक्ति की थी वे यवतमाल के वामनराव धर्माधिकारी, कामठी के कुछ सेनाधिकारी, क्रांतिकारी युवकों को निशाने बाजी की शिक्षा देने वाले नानासाहेब टालाटुले तथा भाऊसाहेब टालाटुले, पहले ही बंदी किये गये वर्धा के अर्जुनलाल सेठी, उत्तर के क्रांतिकारियों से संबंध

प्रस्थापित करने के लिये डॉक्टरजी ने जिनको अमृतसर भेजा था वे आप्पाजी जोशी, सन् १८१७ के 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक मंडल' के चिरंजीवलाल बड़जाते, अजमेर को केन्द्र बनाकर हिन्दी भाषी प्रदेशों में क्रांतिकार्य का जाल बिछाने के लिये बालवीर हरकरे तथा नानाजी पुराणिक आदि बीस युवकों को साथ में देकर जिनको डॉक्टरजी ने भेजा था वे वर्धा के गंगाप्रसादजी पांडे, वैसे ही उस समय के सेंट्रल प्रॉविसेस से क्रांतिकार्य में शामिल होने वाले लगभग १५० युवक, — सबका स्मरण डॉक्टरजी को किसी भी आनंद के क्षण में उत्कटता से होता ही था।

प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् 'इंग्लैंड का संकट भारत के लिये सुअवसर है' "England's difficulty is India's opportunity" कहावत कालबाह्य हो गई और उस स्थिति में अब तक फैलाए गये क्रांतिकार्य को समेट लेना डॉक्टरजी के लिये आवश्यक हो गया। क्रांतिकार्य की तीव्रता बढ़ाने के पीछे विचार यह था कि 'इंग्लैंड के संकट को भारत का सुअवसर' मानना चाहिये। किन्तु महायुद्ध का निर्णय मित्र राष्ट्रों के पक्ष में हो जाने के कारण यह विचार काल बाह्य हुआ और नई परिस्थिति में अब तक फैलाए हुए कार्य को समेट लेना आवश्यक हो गया। अब तक क्रांतिकार्य में लगे हुए कार्यकर्ताओं का बचाव तथा पुनर्वसन कैसे करना यह जटिल समस्या डॉक्टरजी के सामने निर्माण हुई। डॉक्टरजी को अपना सारा ध्यान इसी समस्या को सुलझाने में समझना पड़ा। यह कार्य याने "ऑपरेशन सालवेज" ('Operation Salvage') था। यह उलझन वाला कार्य डॉक्टरजी इधर लगभग पूरा करते तब तक उधर राष्ट्रीय स्तर पर तिलक युग का अंत हुआ और गांधी युग का प्रारंभ। अबतक देश के जिस मानसिक वायु मंडल में डॉक्टरजी ने काम किया था वह एकदम बदल गया। फलस्वरूप जनता की मानसिकता में स्वाभाविक रूप से परिवर्तन हुआ।

इस सम्पूर्ण स्थित्यंतर का सूक्ष्म निरीक्षण तथा अध्ययन डॉक्टरजी कर रहे थे। किन्तु साथ ही साथ अपने मूल ध्येय को सामने रखकर परिवर्तित परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में आगे वैसे बढ़ना, यह मुख्य प्रश्न था। स्वराज्य प्राप्ति तात्कालिक लक्ष्य। उसको साध्य करने के लिए माध्यम के नाते काँग्रेस तथा हिन्दू महासभा दो राजनैतिक दल थे, किन्तु राष्ट्र के दूरगामी ध्येय की सिद्धि के लिये ये राजनीतिक माध्यम सक्षम नहीं, केवल स्वराज्य प्राप्ति से अंतिम ध्येय प्राप्त नहीं हो सकता,

उसके लिये दूरदृष्टि रखते हुए मौलिक चिंतन के आधार पर नया माध्यम खोजने की आवश्यकता है, यह बात पहले से डॉक्टरजी के ध्यान में थी।

३. परिवर्तित परिस्थितियाँ : गांधीयुग

सन् १९२० से १९४० तक के दो दशकों में परिस्थितियों का प्रवाह कितना गतिमान रहा इसका अनुमान कई बातों से लगाया जा सकता है। उनमें से एक सूचंकांक डॉ॰ मुंजे के जीवन में इस बीच आए उतार-चढ़ाव को माना जा सकता है। देश के दूसरे किसी भी प्रान्त की तुलना में सी.पी. और बरार की कांउसिल में डॉ. मुंजे के नेतृत्व में विधायक दल द्वारा किया गया कार्य सबसे अधिक प्रभावी रहा, यह प्रशस्ति-पत्र प्राप्त होने का क्षण उनके यश का परमोच्च बिन्दु था, तो कम्युनल अवार्ड के मुद्दे पर अण्णे-मालवीय के कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी के प्रत्याशी के नाते चुनाव लड़ने के बाद मतदान क्षेत्र अति सीमित होते हुए भी, ३२१६ मतों से हुई उनकी हार उनके सार्वजनिक जीवन का निम्नतम बिन्दु में था। यद्यपि इस विषय में सही अनुमान करना समकालीनों के लिए भी कठिन ही रहा कि श्री विपिनचन्द्र पाल, श्री न.चि. केलकर आदि की उन दिनों हुई हालत और कई प्रदेशों में प्रस्थापित जननेतृत्व को चुनौती देते हुए जो वैकल्पिक नेतृत्व (बंगाल में श्री जे.एम. सेनगुप्ता, विदर्भ में श्री बृजलाल बियाणी, मराठी मध्य प्रान्त में बैरिस्टर अभ्यंकर) सामने आया वह कांग्रेसी आन्दोलन के व्यापक स्वरूप का स्वाभाविक परिणाम था या किसी पूर्वनियोजित षड्यंत्र का फल!

नई परिस्थिति में कई नई शक्तियाँ उभरकर आ रही थीं।

मांटफोर्ड सुधार के अन्तर्गत अक्तूबर, १९२० में सम्पन्न हुए प्रथम चुनाव में कांग्रेसियों के हिस्सा लेने का कोई प्रश्न ही नहीं था। तब तक स्वराज्य पार्टी का भी गठन नहीं हुआ था। इस चुनाव ने ब्राह्मणेतर पक्ष को बढ़ावा दिया और उसे एक शक्ति के रूप में खड़ा किया। नागपुर के श्री वामनराव घोरपडे तथा बाबूराव भोंसले, बुलढाणा के श्री पंढरीनाथ पाटिल, मोर्शी के नाना साहब अमृतकर, वर्धा के रा.ब. नायडू अमरावती के अकर्ते, चांदूर तहसील के गुलाबराव नायगांवकर इस पक्ष के प्रमुख प्रवक्ता थे।

सन् १९२० में नागपुर में सम्पन्न हुए अखिल भारतीय बहिष्कृत समाज

परिषद के अध्यक्ष पद से बोलते हुए छत्रपति शाहू महाराज ने ब्राह्मणेतर नेताओं से सवाल किया था कि सामाजिक क्षेत्र में ब्राह्मणों के स्तर पर आने की इच्छा तो आप रखते हो, किन्तु उसी तरह अस्पृश्यों को अपने बराबर बिठाने की तैयारी आपके मन की है क्या? इसके परिणामस्वरूप और पश्चिम महाराष्ट्र में उस समय चल रही डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की गतिविधियाँ सुनकर नागपुर प्रदेश के अस्पृश्य समाज में भी (विशेष रूप से महार वर्ग में) नई सामाजिक चेतना तथा नेतृत्व का उदय हो रहा था। श्री दशरथ पाटिल आदि दलित कार्यकर्ता उस समय युवास्था में थे।

इस समय मजदूर क्षेत्र भी जागृत हो रहा था। इसके प्रमुख कार्यकर्ता थे श्री धुंडिराजपंत ठेंगड़ी, श्री किसन फाग् तथा श्री रामभाऊ रूईकर।

इसके बिल्कुल विपरीत प्रदेश के कुछ देशभक्त मालगुजार लोग भी (विनोद में नामकरण किए हुए) "नरेन्द्र मण्डल" में बीच-बीच में एकत्रित होते थे। इसमें सर्वश्री टालाटुले, बाबासाहब तरोडेकर और समीउल्ला खां आदि शामिल थे।

कांग्रेसी चुनाव के मैदान में नहीं थे। इस कारण वहां अवांछनीय तत्वों को आगे बढ़ने का अवसर प्राप्त न हो, इस बुद्धि से काम करने वाला 'राष्ट्रीय पक्ष' कार्यरत था। इसके प्रमुख थे श्रीमान् बाबासाहब खापर्डे, बैरिस्टर रामराव देशमुख, मनोहरपंत देशपाण्डे, गोविन्दराव चरडे (वर्धा), येली केली के डॉ. घोपटे और बलवंतराव देशमुख (चांदा)।

हिन्दू महासभा भी सक्रिय थी। इसमें डॉ. मुंजे, डॉ. हेडगेवार, राजे लक्ष्णराव भोंसले, विश्वनाथराव केलकर, जगन्नाथ प्रसाद वर्मा, "सावधान" साप्ताहिक के सम्पादक रा.बा. मावकर तथा पु.भा. भावे आदि उसके लेखक, प्राध्यापक वि.घ. देशपाण्डे, बालशास्त्री हरदास, बिन्दु माधव पुराणिक प्रभृति क्रियाशील थे। यही लोग कम्युनल अवार्ड के प्रश्न पर निर्माण हुए 'कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी' के भी कार्यकर्ता रहे थे।

डॉ. मुंजे की पकड़ शिथिल होने के बाद मराठी मध्य प्रान्त कांग्रेस कमेटी जिनके हाथ में गई वे नए नेता थे बैरिस्टर मोरूभाऊ अभ्यंकर, श्री जमनालाल बजाज, महात्मा भगवानदीन, जनरल मंचरशा आवारी, हलदे, ऊधोजी, दादा

धर्माधिकारी, दीनदयाल गुप्त, नीलकंठराव देशमुख (विरूलकर), डॉ॰ ना.भा. खरे, ए. श्री पटवर्धन, बाबूराव हरकरे, "नि:स्पृह" के सम्पादक मा. ज. कानेटकर, गणपतराव टिकेकर, प्रभृति। विदर्भ में बापूजी अणे तथा वीर वामनराव जोशी के साथ-साथ बृजलाल बियाणी उभरकर आ रहे थे।

"महाराष्ट्र" पत्र के सम्पादक श्री गोपालराव ओगले का भी जगजागरण के कार्य में अपने ढंग का दलनिरपेक्ष योगदान था।

महात्मा गांधी का प्रमुख केन्द्र वर्धा में रहने के कारण राष्ट्रीय स्तर के सभी राजनीतिक नेताओं के लिए नागपुर प्रदेश में बार-बार आना आवश्यक हो जाता था और वर्धा (मगनवाड़ी) में चलाए गए विविध रचनात्मक कार्यों के केन्द्र सात्विक और रचनात्मक वृत्ति के कार्यकर्ताओं के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गए थे। आगे चलकर "सर्वोदय" आन्दोलन का केन्द्र भी वर्धा के परिसर में ही रहा।

गांधी-नीति से असहमति रखने वाले तिलक पक्षीय वकील तथा बुद्धिजीवी लोग प्रदेश में जगह-जगह थे। गांधीजी की अहिंसा को स्वीकार न करने वाले कुछ क्रान्तिकारी भी अनुकूल समय की प्रतीक्षा कर रहे थे।

वर्णाश्रम स्वराज्य संघ के श्री अप्रबुद्ध, निवृत्त न्यायाधीश पराण्डे तथा श्री गिरणीकर अपने साप्ताहिक पत्र द्वारा अपने मत का प्रचार कर रहे थे।

इन सबके साथ संघ संस्थापक डॉक्टर जी के दलनिरपेक्ष वृत्ति से घनिष्ठ संपर्क तथा मधुर संबंध थे।

इनके अलावा डॉक्टर जी की सम्पर्क सीमा में सर्वश्री नारायणराव अलेकर, न्यायमूर्ति भवानीशंकर नियोगी, डी. लक्ष्मीनारायण, दाजीशास्त्री चांदेकर, तात्याजी वझलवार प्रभृति सर्वमान्य व्यक्ति भी थे।

४. अपरिवर्तित कार्यसूत्र

"कि कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्य यत्र मोहिता:।" गीता ४.१६

सात दशकों के बाद भी संघ की अंतिम संकल्पना का पर्याप्त दर्शन जनता

के सम्मुख प्रस्तुत होने के बावजूद संघ का स्वरूप, उसके लिए आवश्यक पथ्य तथा निर्बंध आदि बातें समझना और समझाना कठिन हो जाता है। प्रारम्भिक दिनों में, जब अंतिम स्वरूप का अति सूक्ष्म दर्शन भी प्रस्तुत नहीं हुआ था, तब वह समझना और समझाना तो बिल्कुल ही असंभव था। ऐसी स्थिति में डॉक्टर जी के मन में कितनी खींचातानी होती होगी और दोनों बातों को संभालते हुए रास्ता निकालने के लिए उन दिनों में कितने धीरज, संयम तथा संतुलन की आवश्यकता रही होगी, इसकी कल्पना करना आज की संघ की प्रगत अवस्था में असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य है।

संघ-संस्थापना की पूर्व तैयारी के नाते डॉक्टर जी ने अपने आनुवांशिक, जन्मजात उग्र स्वभाव पर नियंत्रण करना शुरू कर दिया था। संघ-स्थापना के पूर्व उनके भाषण जिन्होंने सुने थे, उनको बाद में उनके सौम्य, शांत भाषण संभाषण सुनकर आश्चर्य होता था। "स्वभावो दुरतिक्रम:" कहावत को उन्होंने गलत सिद्ध किया था। शत-प्रतिशत ध्येयनिष्ठा, उसके परिणामस्वरूप व्यक्तिगत अहंकार का सम्पूर्ण अभाव होने के कारण वैयक्तिक स्तर पर किसी से भी अनबन होने की सम्भावना नहीं थी। "नीचत्व पहिलेचि ध्यावे। आणि मूर्खपण।" (पहले ही अपनी नीचत्व तथा मूर्खता पर ध्यान देना चाहिए।) की समर्थोक्ति के अनुसार उनका व्यवहार था। इसी कारण राजनीतिक क्षेत्र में मतभेद रखने वाले लोग भी उनके प्रति प्रेम तथा आदर की भावना रखते थे। डॉक्टरजी भी जहां कहीं जाते थे वहां के श्रेष्ठ व्यक्तियों से मिलकर उनके प्रति सम्मान का भाव प्रकट करते थे।

उन दिनों सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में तरह-तरह के मत-प्रवाह प्रचलित थे। आस्तिक-नास्तिक, मूर्तिपूजा के समर्थक-विरोधक, द्वैतवादी-अद्वैतवादी, समाज सुधारक और सनातनी।

इन सभी विषयों पर डॉक्टर जी के दक्षतापूर्वक नारदप्रणीत "वादो नावलंव्य" की भूमिका अपनाई थी। इस संयम के पीछे विचार यह था कि जिसे विभिन्न मत-मतान्तरों से युक्त सभी बन्धुओं को एकत्रित करना है, उसे किसी भी एक विशिष्ट मत का पक्षधर बनना उचित नहीं। उनके मन में आर्थिक क्षेत्र में विश्व के सभी देशों को पूंजीवाद के चंगुल से मुक्त कराने का ध्येय था। यह बात भी तभी स्पष्ट हो चुकी थी जब उनके ही आग्रह पर नागपुर कांग्रेस (१९२०) की स्वागत समिति ने इस

शब्दावली से युक्त प्रस्ताव विचारार्थ कांग्रेस की विषय नियामक समिति के पास भेजा था। किन्तु इस क्षेत्र में भी प्रत्यक्ष स्वयं पक्षधर न बनते हुए ट्रेड यूनियनों के नेताओं के साथ डॉक्टरजी ने सौहार्द तथा सहयोग के सम्बन्ध कायम रखे थे।

देशभक्त के नाते तिलक युग से ही वे कांग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ता थे। उस समय कांग्रेस का स्वरूप एक पार्टी का नहीं, अपितु ब्रिटिश साम्राज्य विरोधी सर्व-साधारण मंच का था। स्वतंत्रता चाहने वाले विभिन्न मतों तथा प्रवृत्तियों के सभी लोग स्वातंत्र्य संग्राम के माध्यम के नाते कांग्रेस में थे। शौकत अली, मोहम्मद अली कांग्रेस में थे तो मुंजे और मालवीय भी थे। अहिंसा को सिद्धान्त के रूप में मानने वाले, उसे केवल रणनीति के रूप में मानने वाले और उस पर विश्वास न रखते हुए भी केवल अनुशासन के नाते मानने वाले, सभी एक ही मंच पर और एक ही छत्र के नीचे थे। एक ही छत्र के नीचे कट्टर राष्ट्रवादी थे तो कट्टर अन्तर्राष्ट्रीयवादी भी थे। हिन्दू महासभा और मृत्यु के पूर्व तिलक जी द्वारा स्थापित कांग्रेस डेमोक्रेटिक पार्टी तथा बाद में बने लोकशाही स्वराज्य पक्ष के लोग भी कांग्रेस में सक्रिय थे। धर्मात्मा मालवीय जी दो बार कांग्रेस और तीन बार हिन्दू महासभा के अध्यक्ष रहे। जनवरी, १९२३ में काउंसिल प्रवेश के प्रश्न पर गांधी जी से मतभेद रखने वाले देशबन्धु चितरंजन दास तथा पंडित मोतीलाल नेहरू ने कांग्रेस के अन्तर्गत ही "स्वराज्य पार्टी" के नाम से अपना अलग गुट बनाया था। सन् १९२६ के फरवरी में जयकर-केलकर ने "रेस्पॉसिविस्ट" पार्टी की स्थापना की और उसी वर्ष अप्रैल में "नेशनलिस्ट पार्टी" की स्थापना की गई। इन दोनों पार्टियों के नेता कांग्रेस के अंतर्गत थे। सन् १९२९ में मौलाना आजाद ने कांग्रेस के अंतर्गत "नेशनलिस्ट मुस्लिम पार्टी" बनाई। सन् १९३४ में समाजवादी विचारों के लोगों ने कांग्रेस के अंदर ही अपने "कांग्रेस सोशलिस्ट ग्रुप" का गठन किया। कम्युनल अवार्ड के प्रश्न पर गांधीजी से मतभेद रखने वाले अण्णे-मालवीय ने "कांग्रेस नेशनलस्टि पार्टी" के नाम से निर्वाचन में भी हिस्सा लिया था। सन् १९३६ में कांग्रेस में प्रवेश करने के पश्चात श्री एम.एन.राय ने अपने "रेडिकल डेमोक्रेंटकि" मित्रों को कांग्रेस के अंतर्गत एकत्र किया था और कांग्रेस सोशलिस्टों को यह सलाह दी थी कि वे "सोशलिस्ट" किसी भी वामपंथी कार्यक्रम के बारे में इतना आग्रह न रखें कि उनको ही कांग्रेस से बाहर जाना पड़े। कांग्रेस के अध्यक्ष पद से त्याग पत्र देने के बाद थोड़े ही दिनों में, मई, १९३९

में, श्री सुभाष चन्द्रबोस ने "फॉरवर्ड ब्लॉक" की स्थापना की थी; किन्तु उसको भी प्रारम्भ में कांग्रेस के अन्तर्गत माना गया था। मतलब यह की सर्वमान्य अर्थ में उन दिनों कांग्रेस का स्वरूप एक नियमित राजनीतिक दल का नहीं था, कांग्रेस एक सर्वसमावेशक (Common Platform) मंच था।

किन्तु ऐसा दिखाई देता है कि इस सर्वसमावेशकत्व की भूमिका धीरे-धीरे संकुचित और संकीर्ण होती गई। विभिन्न मतवादियों को संभालकर चलने की सहिष्णुता अधिकाधिक कम होती गई और कांग्रेस का "मंच" से "दल" में रूपान्तर होता गया।

१९३७ तक कई संघ के स्वयंसेवक कांग्रेस में थे और कई कांग्रेसी संघ में थे। आजकल संघ के स्वयंसेवकों से यह पूछा जाता है कि स्वातंत्र्य संग्राम के समय संघ वाले कहाँ गये थे? यह प्रश्न पूछने वाले या तो अज्ञानी हैं या दांभिक। १९३७ तक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष तथा त्याग करने वाले सभी लोगों ने यह काम कांग्रेस के झंडे के नीचे ही किया था। यहाँ तक की संघ स्थापना के पश्चात् व्यक्तिगत रूप में डॉक्टरजी ने अपने प्रमुख साथियों के साथ जंगल सत्याग्रह किया, वह भी कांग्रेस के तत्वावधान में तथा कांग्रेस का ध्वज हाथ में लेकर ही किया।

उन दिनों के वातावरण का यह उदाहरण इस बात को स्पष्ट करता है।

सन् १९३४ के दिसम्बर में महात्माजी संघ के वर्धा जिला-शिविर में आए थे, यह बात सर्वविदित है। किन्तु उस समय की यह दूसरी घटना उतनी प्रसिद्ध नहीं है कि उस जिला शिविर के लिए जमीन तथा अन्य सामान कांग्रेस के कोषाध्यक्ष श्रीजमनालाल बजाज जी ने दिया था। शिविर उद्घाटन के समय जमनालालजी दौरे पर थे। उनकी पत्नी सौभाग्यवती जानकी देवी बजाज उस समय उपस्थित थीं। उन्होंने पूज्य आप्पाजी जोशी से कहा, "हम आपकी और क्या सेवा कर सकते है?" माननीय आप्पाजी ने कहा, "आपने सभी काम तो पहले ही कर दिया है। आपकी सहायता के भरोसे ही हमारा यह शिविर सम्पन्न हो रहा है।" थोड़ा रूककर आप्पाजी ने कहा, "एक बात मन में थी। किन्तु वह बताना उचित होगा या नहीं होगा इसके विषय में मेरे मन में दुविधा है"। सौभाग्यवती जानकी देवी ने

कहा, "दुविधा का कोई कारण नहीं है। आपके मन में जो विचार आया है वह निः संकोच प्रकट कीजिए"। आप्पाजी ने कहा, "कल हमारे यहाँ डॉ॰ हेडगेवार आने वाले हैं। उनको मिलने के लिए बहुत लोग आएंगे। मेरे मन में आया कि गांधीजी के आश्रम में उनसे मिलने आने वालों के लिए जो तंबू लगाया गया है, वह दो दिन के लिए हमें मिल जाता तो सुविधा होती"। सौभाग्यवती जानकी देवी ने कहा, "मैं बापू से बात करती हूँ।" उन्होंने महात्माजी से बात की। महात्माजी ने कहा, "इसमें क्या दिक्कत है? वे डॉ॰ हेडगेवारजी की सुविधा के लिए तंबू चाहते है न, तो वह उन्हें दीजिए। लोगों से मिलने का काम हम दो दिन आश्रम के हॉल में करेंगे"। और उसी दिन शाम को गांधीजी का तंबू लेकर सौभाग्यवती जानकी देवी का कर्मचारी संघ शिविर में आ गया।

१९३७ के बाद यह वातावरण बदल गया।

२४ जुलाई १९३५ को ब्रिटिश संसद ने "गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया बिल" पारित किया। २ अगस्त को उसे सम्राट की स्वीकृति प्राप्त हुई। २३ अगस्त, १९३६ को कांग्रेस ने अपना "घोषणा-पत्र प्रकाशित किया। फरवरी, १९३७ में चुनाव हुए। १७ मार्च, १९३७ को कांग्रेस ने सम्बन्धित लोगों को प्रान्तों में कांग्रेस में मंत्रिमण्डल बनाने का अधिकार दिया। देश के ११ में से ७ प्रान्तों में कांग्रेस के मंत्रिमण्डल बन गए। सितम्बर, १९३८ में असम में भी कांग्रेस का मंत्रिमण्डल बना। सिंध में कांग्रेस समर्थित मंत्रिमण्डल सत्ता में आया। इस पूरी अवधि में सरदार बल्लभभाई पटेल कांग्रेस की संसदीय उपसमिति के अध्यक्ष थे। शायद मंत्रिमण्डलों को सरकार के साथ चल रहे युद्ध का ही एक अंग माना गया था। इस कारण सम्पूर्ण जिम्मेदारी संभालने वाले व्यक्ति को युद्धकालीन सर्वाधिकार देना अनिवार्य हुआ होगा। किन्तु संगठन की आन्तरिक अवस्था की दृष्टि से इस स्थित्यंतर से निर्मित वायुमण्डल का अपरिहार्य परिणाम यह हुआ कि गांधी जी से सहमति न रखने वालों के लिए कांग्रेस में रहना असम्भव हो गया। सरदार पटेल के बारे में जान गुंथर ने लिखा है कि "वह दल के श्रेष्ठतम प्रमुख है। वह दल को व्यवस्थित और संगठित करने वाले कठोर व्यक्ति है। जिनकी तुलना जिम फार्ले से की जाती है। एक बार गांधी जी निश्चित कर लें की कौन-सी नीति अपनानी है तो पटेल उसे पूरा करवा कर दम लेते हैं वे कांग्रेस के आठ मंत्रिमण्डलों को नियंत्रित करते हैं"।

एक अन्य अधिकारी लेखक कहते हैं "वह (पटेल) कांग्रेस के फ्यूहरर थे और वैधानिक एवं वास्तविक रूप में भी कांग्रेस संसदीय साम्राज्य के सम्राट थे।"

इसी के फलस्वरूप दिसम्बर १९४० में एम.एन. रॉय को कांग्रेस के बाहर जाना पड़ा। लगभग उसी समय सुभाष बाबू की भी यही अवस्था हुई और इसके थोड़े ही दिन पूर्व हिन्दुत्वनिष्ठ लोगों ने भी अनुभव किया कि अब कांग्रेस में रहना सम्भव नहीं है। सर्वसमावेशक मंच के स्वरूप से एक दल में होने वाला कांग्रेस का रूपान्तरण नरीमन-खरे-सुभाष प्रकरणों से पूर्णरूपेण स्पष्ट होता है।

किन्तु रूपान्तरण की यह प्रक्रिया पूर्ण होने के पूर्व तक सभी देशभक्तों की इच्छा कांग्रेस में ही रहते हुए उसे सर्वसंग्राहक साम्राज्य विरोधी माध्यम बनाने की रही और इसी कारण गांधी जी से हुए मतभेदों के बावजूद हिन्दुत्वनिष्ठ भी पूरी शक्ति लगा कर, राजनीति के क्षेत्र में कांग्रेस के ही ध्वज के नीचे सक्रिय थे। डॉक्टर हेडगेवार जी भी उन्हीं में से एक थे।

तिलकजी की मृत्यु के समय नागपुर प्रदेश में सर्वसम्मति से कांग्रेस का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी डॉ॰ मुंजे पर थी। उनके ही प्रभाव तथा कार्यकुशलता के कारण मध्यप्रान्त और बरार में काउंसिल प्रवेश का कार्यक्रम देश में सबसे अधिक सफल हुआ था। विदर्भ में लोकनायक बापूजी अणे का एकछत्र नेतृत्व तथा तिलक विचारों के जनमानस पर हुएप्रभाव के कारण डॉ॰ मुंजे की स्थिति मराठी मध्य प्रान्त में मजबूत थी और वहाँ के कार्यकर्ताओं की टोली भी एकसूत्र थी, जिसके प्रमुख कार्यकर्ता डॉक्टर जी और आप्पाजी जोशी (वर्धा), प्रभृति थे।

गांधी-युग में प्रान्तीय कांग्रेस के इस स्वरूप में धीरे-धीरे परिवर्तन होने लगा। अन्य कुछ प्रदेशों के समान यहाँ भी तब तक के प्रस्थापित लोकनेतृत्व को चुनौती देने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी या बढ़ाई गई। मांटफोर्ड योजना के अन्तर्गत हुए प्रथम चुनावों में जिन अवांछनीय प्रवृत्तियों को इस प्रान्त में बढ़ावा मिला उनकी पृष्ठभूमि में गांधी आन्दोलन की व्यापकता का परिणाम, समय बीतने के साथ-साथ जनमानस में तिलकजी के व्यक्तित्व-कर्तृत्व का विस्मरण बढ़ते जाने की स्वाभाविक या अंशत: सुनियोजित प्रक्रिया, तिलक स्वराज्य फंड के पैसे से स्थान-स्थान पर ऐसे नए व्यक्तियों की कांग्रेस के पूर्णकालीन कार्यकर्ता के रूप में नियुक्तियाँ जिनके

मन में तिलक प्रणाली के विषय में उदासीनता और अनास्था थी, गांधी युग का नए राष्ट्रीय नेतृत्व की नई प्रतिमा निर्माण का सुनियोजित प्रयास और साथ-साथ कुछ दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएँ, जैसे— प्रथम डॉ॰ मुंजे गुट के ना. श्री ब. ताम्बे और बाद में उसी गुट के माने गए श्री ई. राघवेन्द्र राव द्वारा मोहवश गवर्नर पद स्वीकार करना आदि बातों के संकलित परिणाम के कारण मराठी मध्यप्रान्त कांग्रेस का स्वरूप तेजी से बदलता गया। अब तक चली आ रही एकसूत्रता समाप्त हुई। तिलक पंथी कार्यकर्ताओं को एकदम भिन्न, विसंगत तथा विरोधी सह-कार्यकर्ताओं के साथ कंधे से कंधा लगाकर कांग्रेस का काम करना पड़ा। इस कारण एक तरह से उनकी ध्येयनिष्ठा तथा संयम की कठिन परीक्षा हुई।

यह सभी जानते हैं कि प्रथम असहयोग आन्दोलन में डॉक्टर हेडगेवारजी का तेजस्वी योगदान था और यह जानकारी भी सबको है कि सन् १९३१ के जंगल सत्याग्रह का उन्होंने नेतृत्व किया था। किन्तु इस कालावधि में मराठी मध्यप्रान्त कांग्रेस के अन्तर्गत वायुमण्डल में कितना प्रतिकूल परिवर्तन हुआ था और ऐसे में नए लोगों, अजनबी चेहरों और भिन्न विचारों के वायुमण्डल में निष्ठा के साथ कार्य करते रहने के लिए कितने संयम, संतुलन और धीरज की आवश्यकता थी, इसकी कल्पना केवल कांग्रेस का इतिहास पढ़ने से नहीं की जा सकती। वे अलौकिक गुण उस कालखण्ड में जिन तिलकपंथियों ने प्रकर्ष से प्रकट किए उनमें एक प्रमुख नाम था— डॉ॰ केशवराव बलिराम हेडगेवार।

उपरिनिर्दिष्ट दो जनआन्दोलनों के बीच की कालावधि में एक अति महत्वपूर्ण घटना नागपुर में हुई थी, अर्थात् भावी महान वटवृक्ष के अतिसूक्ष्म दिखने वाले बीज का बिना प्रसिद्धि के आरोपण अर्थात् राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना।

यहाँ इसका विस्तृत विवरण देने की आवश्यकता नहीं कि समकालीन सभी देशहितैषी सार्वजनिक कार्यों से प्रत्यक्ष सक्रिय सम्बन्ध, देशी-विदेशी विचारधाराओं से अच्छा परिचय तथा यह सब करते हुए साध्य-साधन विवेक के विषय में मन में लगातार चलने वाले मौलिक तथा गहन चिन्तन के परिणामस्वरूप—

(१) डॉक्टरजी की दृष्टि द्विसंगमी (बाइफोकल विजन) हो गई थी। तात्कालिक लक्ष्य के रूप में हिन्दू राष्ट्र की स्वतंत्रता, जिसकी प्राप्ति इसी जीवन में (याचि देही-याचि डोला) हो और अन्तिम लक्ष्य के रूप में हिन्दू राष्ट्र का परमवैभव।

(२) अन्तिम साध्य के लिए साधन के रूप में धर्म-संरक्षण और धर्म के संरक्षण के लिए आधार अर्थात् हिन्दुओं की विजयशालिनी संगठित कार्यशक्ति यानी इस सम्पूर्ण हिन्दू समाज की सुसंगठित अवस्था।

(३) यह सुसंगठित अवस्था प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य। एक-एक हिन्दू के हृदय पर राष्ट्र के प्रति समर्पण का संस्कार अंकित करके उसे सुसंस्कारित करना अर्थात् "स्वयंसेवक" बनाना; ऐसे स्वयंसेवकों का अनुशासनबद्ध संगठन खड़ा करना और सम्पूर्ण हिन्दू राष्ट्र के साथ परिकल्पना की दृष्टि से समव्याप्त और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से एकात्म राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य बढ़ाते-बढ़ाते इतना बढ़ाना कि सम्पूर्ण हिन्दू समाज संघमय हो, संघ समाजमय न हो और इस तरह संघ और समाज में अद्वैत स्थापित हो।

तात्कालिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए साधन राजनीतिक दल, स्वातंत्र्य संग्राम के लिये माध्यम कांग्रेस का सर्वसमावेशक मंच और उसकी मुस्लिम पोषण नीति का अंदर से और बाहर से विरोध कर हिन्दू हितों की रक्षा के लिए माध्यम हिन्दू महासभा। सन् १९३७ में कांग्रेस के स्वरूप में परिवर्तन होने तक यह स्थिति रही।

हिन्दू महासभा के सभी नेताओं के विषय में डॉक्टरजी के मन में आदर की भावना थी और उन सभी के साथ डॉक्टरजी के मधुर सम्बंध थे। किन्तु संघ स्थापना के पश्चात् पूर्ववत् व्यक्तिगत सम्बन्ध कायम रखते हुए भी संघ हित की दृष्टि से आवश्यक नित्यानित्य विवेक एक क्षण के लिए भी डॉक्टरजी ने आँखों से ओझल नहीं होने दिया। डॉक्टरजी की मान्यता थी कि जैसे अन्तिम लक्ष्य की ओर ध्यान रखने के कारण तात्कालिक की ओर दुर्लक्ष्य करना अव्यवस्थित चित्त का लक्षण है, वैसे ही तात्कालिकता के सामयिक आवेश में बह जाने के कारण अंतिम लक्ष्य को क्षति पहुँचाने वाला कोई कार्य करना भी अव्यवस्थित चित्त का ही लक्षण है। अंतिम तथा तात्कालिक आवश्यकताओं में नित्यानित्य का संघानुकूल संतुलन रखना परमआवश्यक था। डॉक्टरजी की कार्यप्रणाली में इस संतुलन तथा व्यक्ति-निरपेक्ष ध्येयनिष्ठा का स्पष्ट परिचय मिलता है। यह संतुलन डॉक्टरजी ने सतत कायम रखा। उनकी दूरदृष्टि, संयम और संतुलन का अन्वयार्थ समझ पाना कई विशुद्ध राजनीतिक हिन्दू सभा के नेताओं के लिए असम्भव हो जाता था और

इस कारण वे डॉक्टरजी और संघ से नाराज रहा करते थे। डॉक्टरजी के संतुलन का मूल्य था एक ओर कांग्रेसियों की नाराजगी और दूसरी ओर हिन्दू सभाइयों की नाराजगी। मृदंग की तरह उन्हें दोनों तरफ से थप्पड़ खाना पड़ता था। किन्तु इससे दोतरफा अप्रियता की चिंता न करते हुए सिद्धांत पर डटे रहना ही डॉक्टरजी को अभिप्रेत था। डॉक्टरजी की धारणा थी कि "लोकमत के प्रवाह में सस्ती लोकप्रियता के पीछे बहते जाना सरल है; किन्तु सच्चे नेता का काम यह है कि यदि स्वतः की सद्विवेक बुद्धि को न जंचे तो लोकमत के प्रवाह के विरुद्ध खड़े रह कर भी अपना मत छाती ठोंकर जनता के सामने रखे। प्रवाह के साथ-साथ बहना नेता का नहीं, अनुयायियों का लक्षण है। सच्चा नेता तो वह है जो परिस्थिति को अपने मन के अनुसार बनाकर लोकमत को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। नेतृत्व की कसौटी लोकमतानुवर्तित्व नहीं, लोक नियंत्रण है।"

इसी धारणा के कारण डॉक्टरजी ने मृदंग के समान दोनों तरफ से थप्पड़ खाना– दोनों तरफ से अप्रियता-लेना स्वीकार किया। डॉक्टरजी की संतुलित दृष्टि का विश्लेषण— श्री नाना पालकर द्वारा लिखित "डॉक्टर हेडगेवार चरित्र" के लिए परमपूजनीय श्री गुरुजी द्वारा लिखी गई प्रस्तावना के समारोप में इस प्रकार पाया जाता है:

"यद्यपि परिस्थिति के अनुसार उन्होंने राजनीति का अवम्लबन किया था, फिर भी राष्ट्र के उत्कर्षापकर्ष के कारणों की मीमांसा करके उन्होंने यह ध्यान में रखा कि स्पर्धा-ईर्ष्यादिपूर्ण प्रचलित राजनीति केवल अनुपयुक्त ही नहीं, अपितु यदि पूरी सतर्कता नहीं बरती गई तो हानिकारक भी सिद्ध हो सकती है। साथ ही यह सत्य पहचानकर कि राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य की आधारशिला उसका जागृत, अनुशासित एवं सुसंगठित सामर्थ्य ही है, उन्होंने परिस्थिति के आघात-प्रत्याघात, स्वकीयों की टीका एवं अवमानना आदि को हँसते-हँसते सहकर भी, उस तंत्र को खड़ा करने में अपना जीवन-सर्वस्व लगा दिया तथा अपने प्रारम्भिक जीवन में सशस्त्र क्रान्ति, कांग्रेस एवं हिन्दू महासभा आदि से जो सम्बन्ध बनाए थे उन्हें सहज दूर कर दिया। उन क्षेत्रों के राष्ट्रभक्त नेताओं तथा उनके कार्य के विषय में मन में आदरभाव रखते हुए उन्होंने स्वयंसेवकों को यह सतर्कता बरतने को बताया कि उनके विषय में क्षणमात्र भी अनादर का भाव उत्पन्न न हो; किन्तु उन्होंने अपना

आदर्श सबके सामने रखते हुए यह शिक्षा भी दी कि "इन कार्यपद्धतियों से दूर रहकर ही समाज-संगठन सम्भव है और वही प्रत्येक कार्यकर्ता को करना चाहिए।

बाल्यकाल से विविध राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न, विदेशी राज्य के नाममात्र से ही जो क्षुब्ध एवं क्रुद्ध हो जाए इस प्रकार अतीव संवेदनशील एवं उत्कट भावनापूर्ण व्यक्ति के लिए प्रचलित राजनीतिक कार्यों से अपना हाथ खींचे बिना मन को हटा लेना तथा सब प्रकार से बुद्धि को जंचने वाले कार्य के अनुकूल ही अपने मनोभाव को बनाना कितना कठिन हुआ होगा और इस प्रकार का परिवर्तन अपने अन्दर लाने वाले की विवेकशक्ति कितनी पराकोटि की और सामर्थ्यवान होगी तथा अपने निष्कर्षों एवं तदनुरूप कार्य पर उनकी निष्ठा कितनी अटल होगी, इसकी कल्पना करना भी कठिन है। इस प्रकार का कल्पनातीत शक्ति सम्पन्न विवेक एवं कार्य की निष्ठा उनके पवित्र, नि:स्वार्थ एवं राष्ट्र समर्पित जीवन के कारण ही प्राप्त करना सम्भव था। यह उनके जीवन का अत्यन्त भव्य एवं अनाकलनीय चमत्कार है।

इस दृष्टि से डॉक्टरजी के चरित्र का पठन लाभदायक होगा, बाहर से सामान्य दिखने वाले स्वरूप में असामान्यता का तेज दिखेगा तथा प्रत्येक के मन में यह आत्मविश्वास जगेगा कि "मैं भी अपने अंत:करण पर राष्ट्र समर्पित जीवन के संस्कार डालकर उन्हें दृढ़ रखते हुए, अपने विकारों को नष्ट कर, स्वभाव को शुद्ध करके, राष्ट्र के चिरकालीन वैभव का निर्माण करने के लिए तथा बाह्य वातावरण के आकर्षणों पर विजय प्राप्त कर राष्ट्र की स्थायी शक्ति के एक अटल अंग के नाते जीवनपर्यन्त परिश्रम करते हुए पूरा जीवन सफल एवं सार्थक कर सकूंगा"।

"परमपूजीय डॉ० हेडगेवार के दिव्य जीवन का यही आशाप्रद एवं स्फूर्तिदायक संदेश हैं।"

— o —

संस्मरणीय विस्मृत

परमपूजनीय श्री गुरुजी की अन्तिम बीमारी के समय माननीय श्री बापूराव मोघे अप्रैल मास में उनके दर्शन के लिए दो दिन नागपुर आकर रहे थे। तीसरे दिन सुबह उनको ग्रैड ट्रंक एक्सप्रेस से दिल्ली जाना था। रेलवे स्टेशन जाने के पूर्व विदाई लेने के लिए वे श्री गुरुजी के कमरे में गए और चरणस्पर्श करके जाने के लिए तत्पर हुए कि गुरुजी ने मामा मुठाल से कहा कि "फोन करके पूछ लो कि जी.टी. राईट टाईम पर है या लेट है।" और बापूराव को कहा कि "संदेशा आने तक दो मिनट बैठ जाइए।" श्री गुरुजी कुर्सी पर बैठे थे। बापूराव उनके सामने जमीन पर बैठ गए।

बापूराव के बैठने के बाद श्री गुरुजी ने अकस्मात् उनसे एक अनपेक्षित प्रश्न किया। (जो संदर्भविरहित था— क्योंकि तब कोई बातचीत नहीं चल रही थी।) श्री गुरुजी ने पूछा— "बापूराव! क्या आपने यह पढ़ा है कि जब श्री अरविंद जेल में थे, उस समय स्वामी विवेकानन्द उनको योग सिखाने के लिए उनकी जेल में जाते थे और उन्हें योग सिखाते थे?" बापूराव ने कहा, "नहीं, मैंने यह नहीं पढ़ा है।"

इसमें ध्यान में रखने लायक बात यह है कि श्री अरविंद के जेल में जाने के कई वर्ष पूर्व विवेकानंद का महानिर्वाण हो चुका था।

"मैंने यह पढ़ा नहीं" ऐसा बापूराव के कहने के बाद एक-दो मिनट तक श्री गुरुजी शांत बैठे रहे। तत्पश्चात् मानो वे स्वयं से ही बात (Thinking aloud) कर रहे हों इस रीति से बोलने लगे, "यह ऐसा ही है। परमेश्वर किसी को कुछ मिशन (ध्येय) देकर दुनिया में भेजता है। वह मिशन एक ही जीवन में पूर्ण होने लायक रहा तो बात दूसरी; किन्तु यदि मिशन बड़ा होगा, एक ही जीवनकाल में पूर्ण होने लायक नहीं होगा और ऐसे व्यक्ति का बीच में ही निधन हुआ तो उसको परमेश्वर मुक्ति प्राप्त करने का अधिकार नहीं देता। मोक्ष प्राप्त न करते हुए, जब तक वह मिशन पूर्ण नहीं होता तब तक अशरीर अपार्थिव अवस्था में रहते हुए उस कार्य का सुपरव्हिजन (देखभाल) करने, उसकी सहायता करते रहने का दायित्व उसको सम्हालना पड़ता है। मिशन पूर्ण होने के बाद ही उसको मोक्ष का अधिकार प्राप्त होता है।"।

जैसा प्रारंभ में कहा गया है, यह बातचीत अकस्मात् और संदर्भविरहित थी।

विवेकानंद क उदाहरण देकर श्री गुरुजी स्वयं अपने ही विषय में संकेत कर रहे थे, यह स्पष्ट था।

दि. १७ मार्च, १९९७ को मुझे इस संभाषण का स्मरण क्यों हुआ? इसका कारण था उस दिन की घटना :—

नागपुर में रेशीमबाग में प्रान्त-प्रचारकों की बैठक चल रही थी। उसके पूर्व नागपुर महानगरपालिक के निर्वाचन में भाजपा को नेत्रदीपक यश प्राप्त हुआ था और भाजपा का एक तरुण कार्यकर्ता देवेन्द्र फडणवीस नागपुर का महापौर निर्वाचित हुआ था। नागपुर में अबतक जितने महापौर हुए उन सबमें वह कम आयु का था। देवेन्द्र संघ का नियमित स्वयंसेवक था। उसके पिता गंगाधरराव फडणवीस बाल्यावस्था से ही स्वयंसेवक थे और दो वर्ष संघ की योजना के अन्तर्गत उड़ीसा के कटक में बिताये थे और वहाँ संघकार्य किया था। देवेन्द्र का सार्वजनिक सत्कार उस दिन एक विशाल सार्वजनिक सभा में श्री लालकृष्ण आडवाणी द्वारा किया गया था। वह कार्यक्रम समाप्त करके श्री आडवाणी, महापौर तथा भाजपा के स्थानीय एवं प्रादेशिक नेता रेशीमबाग में आये थे। वहाँ सबका चायपान समाप्त होने के पश्चात् श्री आडवाणी का सभी प्रान्त-प्रचारकों के साथ अनौपचारिक रूप से बातचीत का कार्यक्रम था। उस अवसर पर नवनिर्वाचित महापौर का छोटा-सा भाषण हुआ। उसमें से उनका स्वयंसेवकत्व प्रकट हो रहा था। तत्पश्चात् श्री आडवाणी का संक्षिप्त भाषण हुआ। इस तरह के विजयोत्सव की ओर संघ का सच्चा स्वयंसेवक रहते हुए राजनीतिक दल का अध्यक्षपद सम्हालने वाले व्यक्ति ने किस दृष्टि से देखना चाहिए, यह उनके भाषण में से उत्तम रीति से प्रकट होता था। कुल मिलाकर वायुमंडल आनंद का था। सभी के मन में आनंद था। कुछ लोगों के मन में हर्षोन्माद भी था। इस समय हम यशस्वी हुए, अब इसके पश्चात् "यावच्चन्द्रदिवाकरो" नागपुर नगर का नेतृत्व अपने दल के पास ही रहेगा, यह विश्वास उनके मन में था। इस तरह के हर्षोन्माद से ग्रस्त लोगों की संख्या कम थी। बाकी सबके मन में सात्विक आनंद था।

उस समय मेरे मन में अकस्मात् यह कल्पना आई कि यह समारोह देखने के लिए पू. डॉ॰ हेडगेवार यहाँ अशरीरी अवस्था में उपस्थित हैं और उनको भी इस अवसर पर बहुत आनंद हो रहा है। यह सब उनकी समाधि के निकट ही हो रहा था।

उनके आनंद का कारण? इसके पश्चात् 'यावच्चनद्रदिवाकरौ' नागपुर नगर संघ के लिए सुरक्षित हो गया है, इस कल्पना से उनको आनंद हुआ होगा क्या? यह तो संभव नहीं है। जो बात सर्वसाधारण नागरिक जानता है, वह पूज्य डॉक्टरजी नहीं जानते होंगे, यह कैसे संभव है? सभी अनुभवी लोग जानते हैं कि राजनीतिक क्षेत्र में यशापयश चिरकालिक नहीं हो सकता। दुनिया में एक भी ऐसा उदाहरण नहीं है कि किसी भी लोकतांत्रिक देश में कोई भी एक राजनीतिक दल सतत— (Continuously) एक सौ वर्ष तक सत्ता में रहा है। सत्ताधारी दल समय-समय (Periodically) पर बदलते रहते है। लिबरल-कॉन्झर्वेटिव, लेबर-कॉन्शर्वेटिव्ह,रिपब्लिकन-डेमॉक्रॉकि-रिपब्लिकन अदल-बदल होता रहता है। "यावच्चन्द्र-दिवाकरों" वाक्प्रयोग राजनीतकि क्षेत्र में नहीं चल सकता। आज यश, कल अपयश, परसो फिर से यश, तदनंतर फिर से अपयश, के परिवर्तन लगातार होते ही रहते है। इस कारण किसी भी एक विजय से हर्षोन्माद होना लड़कपन है।

यह वस्तुस्थिति होते हुए भी इस अवसर पर डॉक्टरजी को आनंद क्यों हुआ होगा?

इस आनंद के लिए संदर्भ राजनीतिक नहीं, अन्य कुछ है।

मुझे ऐसा लगा कि इस समय डॉक्टरजी को दि. २ फरवरी १९४८ को इस स्थान पर हुई घटना याद आई होगी।

गांधी हत्या के बाद सत्ताधारी दल ने जानबूझकर निर्लज्जतापूर्वक संघ के खिलाफ झूठा प्रचार करके जनता को भड़काया और सभी प्रचार माध्यमों का उपयोग कर जनता को गुमराह किया। हत्या की घटना घृणास्पद थी ही। इस कारण लोग उत्तेजित भी थे। उन्होंने पूजनीय डॉक्टरजी की समाधि तथा पूज्यश्री गुरुजी के निवास स्थान पर हमला किया। उस समय समाधि की कुछ तोड़फोड़ भी हुई। मतलब यह कि उस समय नागपुर के जनमानस का लंबक (पेंडुलम) एक गलत छोर पर (Extreme) पहुँच गया था।

कालक्रम में से वस्तुस्थिति जैसे-जैसे अधिकाधिक स्पष्ट होती गई वैसे-वैसे लोगों की मन:स्थिति भी बदलती गई, तो भी सरकारी प्रचार का परिणाम जनमानस में इतनी गहराई तक पहुँच गया था कि सत्यस्थिति की कल्पना आने के

बाद भी लोगों के मन से पूर्वाग्रह निकल पाना अति कठिन था। कुछ विचारवंत इस पूर्वाग्रह से जल्दी मुक्त हुए। हमला करने वाले लोगों का नेतृत्व करने वाले जनरल मंचरशा आवारी आदि नेताओं ने यह पूर्वाग्रह पूर्णरूपेण छोड़ दिया और पूजनीय श्री गुरुजी के निवास स्थान पर होने वाली प्रार्थनोत्तर सायंकालीन अनौपचारिक बैठकों में आने तथा चरणस्पर्श के साथ ताई का वंदन करने का उपक्रम प्रारंभ किया। किन्तु ऐसे समझदार लोगों की संख्या अल्प थी। सर्वसाधारण नागरिकों को संघ का निर्दोषत्व सिद्ध होने के पश्चात् भी पूर्वाग्रह "मानसपटल से दूर करना आवश्यक प्रतीत नहीं हुआ।"

इस पृष्ठभूमि के कारण डॉक्टरजी को इस अवसर पर आनंद होना स्वाभाविक था कि एकदम गलत छोर (Extreme) पर गया जनमानस का लंबक (पेंडुलम) ४९ वर्षों के बाद प्रथम बार ही सुवर्णमध्य पर आया है। वह इस समय जिस बिंदु पर है उसी बिंदु पर वह हमेशा अखंड कायम रहेगा, ऐसा मानना डॉक्टरजी जैसे मानसशास्त्रज्ञों के लिए असंभव था। जनमानस अस्थिर, चंचल रहता है। विभिन्न घटनाओं का परिणाम उस पर होता रहता है। इस कारण आज सुर्वणमध्य बिंदु पर आया हुआ जनमानस का लंबक काल के प्रवाह में कभी इस ओर तो कभी उस ओर, तो कभी विपरीत दिशा में मार्गक्रमण करता रहेगा यह आकलन करने के लिए बहुत बुद्धिमानी की आवश्यकता नहीं थी। किन्तु लगभग पाँच दशक की दीर्घकालावधि के पश्चात् यह लंबक प्रथम बार सुवर्णमध्य बिंदू पर आया है, यह बात अति संतोषजनक थी। इसके पश्चात् कालक्रम में यह लंबक सुवर्णमध्य की कभी इस दिशा में तो कभी दूसरी दिशा में आवागमन करता रहेगा, यह स्पष्ट था, तो भी इस समय लंबक सुवर्णमध्य पर आया है यह संतोषजनक घटना है, ऐसा डॉक्टरजी के मन में अवश्य आया होगा और इस कारण उन्होंने सांत्वनायुक्त आनंद का अनुभव किया होगा, यह भी स्पष्ट है।

इसके पश्चात् मन में विचार आया कि ऐसे सात्विक आनंद के अवसर पर डॉक्टरजी ने किस-किसका कृतज्ञतापूर्वक स्मरण किया होगा? क्योंकि ऐसा सार्वत्रिक अनुभव है कि ऐसे समय महापुरुष स्वयं विनम्र हो जाते है और उपकार करने वाले सभी छोटे-बड़े व्यक्तियों का हृदयपूर्वक स्मरण करते हैं।

आज की स्थिति में यह विषय अति औचित्यपूर्ण अतएव महत्वपूर्ण है।

किन्तु इस विषय को पूर्ण न्याय देना अब अथवा इसके पश्चात् कभी भी संभवनीय नहीं है। उल्टे, यह संभावना अधिक है कि जैसे-जैसे समय बीतता जाएगा वैसे-वैसे अपने स्मरण में जो नाम हैं वे उत्तरोत्तर विस्मृति के गर्त में चले जाएंगे और डॉक्टरजी के जीवन का, कार्य का तथा सम्पर्क का सम्पूर्ण क्षेत्र शब्दबद्ध करना अधिकाधिक अव्यवहार्य हो जाएगा। मेकॉलेने ऐसा कहा है कि, "जिस पीढ़ी के लोग अपने पूर्वजों के श्रेष्ठ कार्यों का स्मरण नहीं रखते उस पीढ़ी के लोगों के हाथ से ऐसा कोई भी महान कार्य नहीं हो सकेगा जिसका स्मरण उनके वंशज करेंगे।" इसीलिए सभी जीवमान तथा विजगीषु देशों में अपना सम्पूर्ण इतिहास उसकी सभी बारीकियों के साथ खोजने तथा उसे प्रकाशित करने का प्रयास अखंड चलता रहता है।

इस दृष्टि से डॉक्टरजी के जीवन तथा कार्य को शब्दबद्ध करने के विषय में कुछ कठिनाइयों का अनुभव होता है। एक तो उनका स्वभाव आत्मविलोपी था। जैसा कि पंडित बच्छराजजी व्यास ने बताया था कि डॉक्टरजी का "लोकप्रसिद्धि पराङ्‌ मुखजीवन" था। यह उनकी नीति नहीं, उनकी प्रकृति थी। फिर क्रान्तिकार्य में जीवन का महत्वपूर्ण कालखंड व्यतीत हो गया था, इस कारण कार्य की गोपनीयता का संस्कार उनके मन पर अधिक दृढ़ हुआ था। महामहोपाध्याय बालशास्त्री हरदास से एक समय जब यह कहा गया कि वे भारत के क्रांतिकारियों का समग्र इतिहास लिखें तो उस समय उन्होंने कहा था कि यह मांग अन्तर्विरोधी है। क्रांतिकार्य की यशस्विता के लिए आवश्यक है सम्पूर्ण गोपनीयता और इतिहास लेखन की यशस्विता के लिए आवश्यक है सम्पूर्ण तथ्यों का प्रकाशन। ये दोनों बातें एक दूसरे से मेल खाने वाली नहीं है। यह सभी जानते हैं कि संघ कार्य का प्रारंभ करते समय डॉक्टरजी कहा करते थे, कि "कागज तथा लेखनी हाथ में न लेते हुए हिंदुओं का विशाल संगठन खड़ा करना, मेरी आकांक्षा है।" उन दिनों की भिन्न परिस्थितियों का यथार्थ आकलन करना आज असंभव है। डॉक्टरजी का सम्पर्क क्षेत्र कितना विस्तृत तथा वैविध्यपूर्ण था, इसकी कल्पना आज के "प्रतिमा (छवि) निर्माणवादी" नेतागण कर ही नहीं सकते। किन्तु जिन व्यक्तियों को डॉक्टरजी स्मरणीय मानते थे उनको भूलना ऐतिहासिक दृष्टि से दोषपूर्ण तथा मानसिकता की दृष्टि से कृतघ्नता का कृत्य होगा। इसलिए डॉक्टरजी के प्रसिद्धि पराङ्‌, मुख तथा गुप्तता की शैली में से भी जो महत्वपूर्ण नाम आज

रिस (Filter) कर हम लोगों तक पहुँचे है, उनको शब्दबद्ध करना उपयुक्त होगा, वरना राष्ट्रीय कृतज्ञता के क्षेत्र का क्रमशः अधिकाधिक संकोच होता जाएगा।

X X X X X

प्रत्यक्ष संघ कार्य तथा संघ-सृष्टि की विविध संस्थाओं में काम करने वाले लोगों के नाम आज के स्वयंसेवक जानते हैं। डॉक्टरजी को स्वयं सूचित न करते हुए भी केवल उनके जीवन से प्रेरणा लेकर अपना-अपना जीवन संघकार्य को पूर्णरुपेण समर्पण करके "प्रचारक" पद्धति की नीव डालने वाले; विदर्भ के बाहर देश के विभिन्न प्रदेशों में संघकार्य का प्रारंभ हो इस हेतु से डॉक्टरजी ने जिनको उच्च शिक्षा के निमित्त से अन्य प्रदेशों में जाने के लिए कहा ऐसे युवा विद्यार्थी; सीधे "प्रचारक" बनकर विभिन्न प्रदेशों में जाकर वहाँ संघकार्य का बीजारोपण करने वाले तथा उसकी हिफाजत करने वाले कार्यकर्तागण; उन प्रचारकों से प्रेरणा लेकर अपने क्षेत्र में संघकार्य के लिए पूरा या अधिकाधिक समय देने वाले स्थानीय तथा प्रादेशिक स्तर के लोग; भारत के बाहर विभिन्न देशों में जाकर वहाँ विविध स्वरूपों में संघकार्य की नींव डालने वाले साहसी स्वयंसेवक, तीनों प्रतिबंधों के कालखंड में सत्याग्रह करने वाले, जेल में जाने वाले तथा जेल के बाहर भूमिगत रहकर प्रतिकार संगठित करने वाले असंख्य स्वयंसेवक; कारावासों में स्वयंसेवकों के संपर्क में आये हुए गैरस्वयंसेवक सज्जन; राष्ट्रजीवन के विविध क्षेत्रों में व्यक्तिगत रूप से प्रवेश करके वहाँ संघ सिद्धान्त के प्रकाश में उपयुक्त कार्यों की रचना तथा विचारों का विकास करने वाले कार्यकर्ता; आदि सभी लोगों के विषय में प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से, तफसीलवार या स्थूलमान से परिपूर्ण या आंशिक जानकारी आज के स्वयंसेवक रखते हैं। किन्तु आज के युवा स्वयंसेवकों को केवल सन् १९४७ के पश्चात् की देश कि स्थिति की ही कल्पना रहती है। सन् १९३७ के पूर्व का देश के सार्वजनिक-राजनीतिक क्षेत्र का मानसिक वायुमंडल कैसा था, इसकी वे कल्पना भी नहीं कर सकते। इस कारण प्राथमिक कालखंड में संघकार्य की नींव किस तरह डाली गई, एकबार अंतिम लक्ष्य निश्चित करने के बाद उस दिशा में आगे बढ़ने के लिए डॉक्टरजी को क्या-क्या परिश्रम करने पड़े तथा आगे चलकर जिस वृक्ष का बीजारोपण करना है उसको प्रारंभिक अवस्था में पशु न खा डाले इस हेतु बीजारोपण के पूर्व ही बाड़ (Fencing) के नाते किस-किस

व्यक्ति या व्यक्तिसमूह के साथ संपर्क प्रस्थापित करना पड़ा, ये सब बातें स्वयंसेवक आज नहीं जानते।

संघ की स्थापना सन् १९२५ के विजयादशमी के सुमुहूर्त पर हुई। तब से अबतक सभी संकटों का मुकाबला करते हुए संघ बढ़ता ही जा रहा है और आगे भी बढ़ता ही जाएगा, इसमें संदेह नहीं। इस प्रक्रिया के चलते संघ के पदाधिकारी के नाते जो-जो लोग कार्यरत रहे या जिन्होंने प्रचारक-विस्तारक के नाते काम किया उनका स्मरण आज की पीढ़ी के स्वयंसेवकों को है। किन्तु नींव डालने के कालखंड में जिन्होंने नींव के पत्थर के नाते ध्येय समर्पित चित्त की विशुद्ध भावना से काम किया, उनके नाम आज विस्मृत हो गए हैं। वैसे उन लोगों का भी विस्मरण हो रहा है, जिन्होंने प्रारंभिक काल में मौलिक सहायता की और फिर एक बार काम ठीक ढंग से चलने के पश्चात् जो निष्क्रिय हो गए। माला गूंथने में सुई की भूमिका निर्वाह करने वाले इन सब श्रेष्ठ लोगों को हम भूल सकते है; किन्तु इस तरह की कृतघ्नता की मानसिकता डॉक्टरजी की नहीं थी। इसलिए किसी भी आनंद के क्षण में डॉक्टरजी उन सब व्यक्तियों का स्मरण कृतज्ञतापूर्वक करते थे।

X X X X X

ऐसे अवसर पर डॉक्टरजी ने किस-किस का स्मरण कृतज्ञतापूर्वक किया होगा? स्पष्ट है कि सर्वप्रथम उनको उनकी भाभी, पूजनीय रमा वहिनि— का स्मरण हुआ होगा। सौभाग्यवती रमा वहिनि ने डॉक्टरजी की मानसिकता से एकरूप होकर अनन्त कष्ट तथा घोर मनस्ताप सहन करते हुए दोनों बंधुओं के स्वभावों की बारीकियों का ध्यान रखते हुए अति गरीब परिवार की गरीबी का दर्शन बाहर के लोगों को न हो इस कुशलता से गृहमोर्चा सम्हाला था। डॉक्टरजी की बाल्यावस्था से ही सौ. रमा वहिनि ने यदि इस तरह गृहमोर्चा न सम्हाला होता तो डॉक्टरजी के लिए मुक्त मन से इतना बड़ा और इतना अधिक काम करना असंभव हो जाता। हमारे लिए यह भगवान के वरदान के रूप में ही हैं— पूजनीय डॉक्टरजी की भाभी सौभाग्यवती रमा वहिनि और पूज्य श्रीगुरुजी की माताजी पूजनीय ताई जी।

संस्कारक्षम बाल्यावस्था में परिवार के बाहर पहला सम्पर्क शिक्षा क्षेत्र से ही आता है। इस दृष्टि से स्वाभाविक रूप से जिनका स्मरण डॉक्टरजी को हुआ होगा

ऐसे व्यक्ति है, नील सिटी हॉयरस्कूल के प्रमुख तात्याजी वझलवार, जिनको केवल शिक्षा क्षेत्र में ही नहीं तो नागपुर के सार्वजनिक जीवन में भी सम्मान्य स्थान था। राष्ट्रीय चतु: सूत्रों में से "राष्ट्रीय शिक्षा" के प्रश्न की ओर गंभीरता से ध्यान देने वाले यवतमाल के "विद्यागृह" के संस्थापक तपस्वी बाबासाहेब परांजपे तथा मुख्याध्यापक श्री दत्तोपंत आपटे, डॉक्टरजी के गुरु स्थान में रहे हुए श्री बाबासाहेब कोलते आदि का डॉक्टरजी के प्रारंभिक जीवन पर हुआ परिणाम नागपुर के लोग जानते है। डॉक्टरजी के अभिभावकत्व की जिम्मेदारी जिन्हें बारबार सम्हालनी पड़ी वे तात्याजी फडणवीस भी सर्वपरिचित ही थे।

वैसे ही देश के सभी लोग जानते हैं कि डॉक्टरजी के प्रारंभिक जीवन में उनके मार्गदर्शक (Mentor) की भूमिका डॉ॰ बालकृष्ण शिवराम मुंजे ने निभाई थी। उन दिनों लोगों की यह धारणा थी कि आगे चलकर सार्वजनिक कार्यों में यशस्वी होने की दृष्टि से प्रशिक्षण प्राप्त करने (Apprenticeship) की आवश्यकता रहती है। अभ्यास की आवश्यकता हुआ करती है। "अभ्यासेंचि प्रकट व्हावे। ना तरी झांकोनि असावे। प्रकट होवोनि नासावे। हे बरे नव्हे।।" इस समर्थोक्ति को लोकप्रमाण मानते थे। इस तरह का उपयुक्त प्रशिक्षण, (Apprenticeship) उपयुक्त अभ्यास ज्येष्ठ पीढ़ी के प्रथितयश व्यक्तियों के मार्गदर्शन तथा अनुभवी समवयस्क लोगों के सहवास से संभवनीय हो जाता था। इस दृष्टि से डॉ॰ मुंजे के साथ ही जिनका महत्व का स्थान रहा वे थे श्री दादासाहेब खापर्डे, लोकनायक बापूजी अणे, "देशसेवक" अच्युत बलवंत कोल्हटकर, कर्मवीर बापूजी पाठक, बैरिस्टर गोविंदराव देशमुख, नीलकंठराव उधोजी, नारायणराव अलेकर, नारायणराव वैद्य, भवानी शंकर नियोगी, "महाराष्ट्र" के संपादक गोपालराव ओगले, प्रसिद्ध क्रांतिकारी डॉ॰ खानखोजे, डॉ॰ चोलकर, दाजीशास्त्री चांदेकर, विश्वनाथराव केलकर, डी. लक्ष्मीनारायण आदि का आनंद के किसी भी क्षण डॉक्टरजी को कृतज्ञतापूर्वक स्मरण होता होगा, इसमें संदेह नहीं।

बाहर के नेताओं के अलावा परिवार में से ही डॉक्टरजी के चाचा माननीय आबाजी हेडगेवार का स्थान इस दृष्टि से डॉक्टरजी के जीवन में अपूर्व था, यह सर्वविदित है।

बाल्यावस्था से ही डॉक्टरजी समर्थ रामदास को "राष्ट्रगुरु" के नाते सम्मान देते थे, यद्यपि वे कभी भी समर्थ संप्रदाय में शामिल नहीं हुए।

"न त्वया सेविता वृद्धाः" का आक्षेप अपने पर न लगे इस दृष्टि से डॉक्टरजी बचपन से ही सावधान थे। इसी कारण लोकमान्य तिलकजी के मांडले जेल से वापस आने के पश्चात् डॉक्टरजी, तिलकजी के यहाँ गायकवाड बाडे में दो दिन रहे थे। उस अवधि में डॉक्टरजी के चाय-पानी, स्नान-भोजन, सोने-विश्राम की व्यवस्था स्वयं तिलकजी देखते थे। तिलकजी के विदर्भ दौरे में उनके कार्यक्रमों की पूर्व तैयारी ठीक ढंग से करने की दृष्टि से डॉ॰ मुंजे ने डॉक्टरजी को कई स्थानों पर भेजा था।

१९२४ के मार्च महीने में रत्नागिरी के निकट शिरगाव जाकर डॉक्टरजी ने सावरकरजी से भेंट की थी और उनके सहवास में दो दिन बिताए थे। प्रारंभ से ही डॉक्टरजी सावरकरजी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। सावरकरजी ने दि. ७ अक्टूबर, १९०५ को पूना में विदेशी वस्त्रों की जो "होली" जलाई वह पूरे देश में उस तरह का पहला ही उपक्रम था। नागपुर के जीवन में इंडियन नेशनल कांग्रेस का स्थान क्या था, इस विषय का विस्तृत विवेचन पूर्व विवरण में आ चुका है। नागपुर, विदर्भ के गैरराजनीतिक सार्वजनिक क्षेत्र भी तिलक मतप्रणाली को आगे जाकर पोषक हो सके, ऐसी मानसिकता निर्माण होने की प्रक्रिया पहले ही प्रारंभ हुई थी। सन् १८८४ में स्वामी दयानन्द नागपुर आये थे। उस समय के उनके सभी भाषण प्रखर राष्ट्रवादी थे। "स्वदेशी" आंदोलन का एक अंग इस नाते स्वदेशी उद्योग प्रारंभ करने वाले कुछ उद्योगपति विदर्भ में पहले ही निर्माण हुए थे। अमेरिका के यादवी (गृह) युद्ध के कारण इंग्लैंड के कपड़ा मिलों को अमेरिकन कपास मिलना बंद हो गया था, इस कारण इंग्लैंड में भारत की कपास की मांग बढ़ गई। उस समय हिंगणघाट तथा नागपुर में कपड़ा मिले प्रारंभ की गई। सारांश, तिलक मत का स्वागत करने की मानसिकता नागविदर्भ में पहले से ही तैयार हो रही थी।

उन दिनों जो घटनाएँ, जो क्रांतिकारी तथा जो साहित्यिक नागपुर के युवकों को प्रखर राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा देते रहे उन सबका उल्लेख पूर्व विवरण में विस्तारपूर्वक किया गया है। इस तरह के साहित्य की निर्मिति करने वाले साहित्यिकों के विषय में युवापीढ़ी के मन में कृतज्ञता का भाव रहता था।

सन् १९०६ के कलकत्ता कांग्रेस के अपने अध्यक्षीय भाषण में दादाभाई नौरोजी ने सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय चतु: सूत्री की घोषणा की थी। उसका प्रभाव डॉक्टरजी के मन पर था। डॉक्टरजी का "स्वदेशी" विषय पर पहला भाषण उनकी बाल्यावस्था में रामपायली नामक स्थान पर सन् १९०८ के विजयादशमी के सीमोलंघन के अवसर पर हुआ था। इस भाषण के बाद ही सरकारी गुप्तचर सतत डॉक्टरजी के पीछे रहने लगे और उनके चाचा यानी आबाजी हेडगेवार की नौकरी में बाधाएँ आनी शुरू हुई: क्योंकि आबाजी ने ही डॉक्टरजी को रामपायली में अपने यहाँ बुलाया था। भाषण के पश्चात् विदेशी सरकार के रावण के पुतले का दहन किया गया था और डॉक्टर जी ने सबको "वंदेमातरम्" की घोषणा करने के साथ-साथ "स्वदेशी व्रत" का पालन करने की शपथ ग्रहण करने के लिए भी कहा था।

उन दिनों "वंदेमातरम्" की घोषणा करने वालों को जेल में डाला जाता था। लोकनायक बापूजी अणे के चरित्रलेखक ने लिखा है कि "वंदेमातरम्" की घोषणा करने और शिवाजी उत्सव, गणेशोत्सव, दासनवमी आदि का संचालन करने वाले, प्रकट सार्वजनिक सभाओं में भाग लेने वाले लोग शेर के विकराल मुख में ही हाथ डाल रहे है, उस समय ऐसा माना जाता था।"

इससे यह पता चलता है कि अपनी बाल्यावस्था में ही डॉक्टरजी ने स्वदेशी के विषय में कितना साहसपूर्ण कदम उठाया था। यह ठीक है कि श्री मोरेश्वर श्रीधर उपाख्य आबाजी हेडगेवार के साहसपूर्ण प्रोत्साहन से इस कार्य में बड़ी सफलता मिली।

स्वदेशी व्रत का डॉक्टरजी ने आजीवन पालन किया। वर्धा के डॉ॰ खानखोजे का क्रांतिकार्य, उनका यहाँ से पलायन, मैस्किको की राज्यक्रांति में तथा क्रांति के पश्चात् हुए राष्ट्र-निर्माण कार्य, विशेष रूप से कृषि के क्षेत्र में, उनका योगदान सर्वपरिचित है। किन्तु यह सर्वविदित नहीं है कि डॉ॰ खानखोजे के "स्वदेश बांधव" संस्था के तत्वावधान में नागपुर में जो स्वदेशी वस्तु-भंडार बनाया था उसमें डॉक्टर जी स्वदेशी वस्तुओं की बिक्री का तथा प्रचार काम करते रहते थे।

X X X X X

शालेय शिक्षा के दिनों में चलाए गए आन्दोलन, बंगाल के निवास के समय किए गए विभिन्न कार्य तथा संपर्क, बंगाल से वापस आने के बाद नागपुर को केन्द्र बनाकर किया गया क्रांतिकार्य का विस्तार और १९१८ के बाद, अब तक फैलाये हुए क्रांतिकार्य को समेट लेने का प्रयत्न आदि कार्यों में जिन्होंने डॉक्टरजी का साहसपूर्वक साथ दिया उन सबका स्मरण डॉक्टरजी को उत्कटता से होता होगा, यह स्वाभाविक है। उन सब साथियों के नाम पूर्व अध्यायों में ग्रंथित किए गए हैं।

X X X X X

बाड़
(Fencing)

डॉक्टरजी के मन में कई वर्षों से संघ जैसा कोई कार्य का प्रारंभ करने का विचार चल रहा था। किन्तु 'फलानुमेया: प्रारंभा:' शैली के कारण वे अपने विचार प्रकट नहीं करते थे। उनका चिंतन मूलगामी तथा दूरगामी था। कार्य के प्रारंभ से लेकर ध्येयसिद्धि तक मार्गक्रमण करते समय मार्ग में कैसी-कैसी बाधाएं निर्माण होगी और उनका निवारण करने के उपाय क्या-क्या हो सकते हैं, इसका सम्पूर्ण साधक-बाधक विचार उन्होंने पहले ही किया था। वे जानते थे कि बीजारोपण करने के पूर्व ही एक सावधानी बरतना आवश्यक होता है। किसी भी नये पौधे को यह भय रहता है कि इधर-उधर के पशु आकर उसको खा न डाले या उखाड़ न दें। यह पशुओं का ही नहीं, नर पशुओं का भी स्वभाव होता है कि इस दृष्टि से बीजारोपण के पूर्व से ही नये पौधे के बाड़ (Fencing) की मजबूत व्यवस्था करना दूरदर्शिता का लक्षण है। प्रत्यक्ष संघ-स्थापना के पूर्व यह बाड़ (Fencing) बनाने का काम डॉक्टरजी ने वर्षों तक प्रयत्नपूर्वक किया। संघ संस्थापना के बाद का संघ का इतिहास सबके सामने है। किन्तु इसकी पूर्व भूमिका बनाने में डॉक्टरजी को लगातार कितने अधिक परिश्रम करने पड़े होंगे और इसके हेतु योजनापूर्वक अपने व्यक्तिगत सम्पर्क का क्षेत्र कितना विस्तृत करना पड़ा होगा, इसकी कल्पना करना उन लोगों के लिये कठिन है जिन्होंने संघ को प्रस्थापित या वर्धिष्णु स्वरूप में ही देखा है।

बाड़ (Fencing) बनाने का यह कार्य तिलक युग से ही चल रहा था।

गांधी-युग के उदय के पश्चात् यह कार्य दुष्कर होगा यह स्पष्ट दिखाई देता था। गांधीजी के व्यक्तित्व के कारण कांग्रेस में मुस्लिम-तोषक नीति का प्रभाव इतना बढ़ गया कि बड़े नेता प्रकट रूप से कहने लगे, "आप चाहें तो मुझे गधा कहिए, लेकिन हिन्दू मत कहिए।" स्वयं को 'हिन्दू' कहने में लोग हीनता का अनुभव करने लगे थे। यह अंदाजा डॉक्टरजी को था कि यदि यही वायुमंडल नागविदर्भ में रहा तो संघ की नींव डालना अति कठिन हो जाएगा। सदैव से पूरे भारत में दो ही प्रांतिक कांग्रेस कमिटियाँ ऐसी थीं जो गांधीजी की मुस्लिम तोषक नीति से मुक्त थीं— लोकनायक बापूजी अणे के नेतृत्व में विदर्भ प्रांत कांग्रेस कमेटी और डॉ॰ मुंजे के नेतृत्व में मराठी मध्य प्रांत कांग्रेस कमेटी। बापूजी अणे के हाथ से विदर्भ कांग्रेस बृजलाल वियाणीजी के हाथ में जाने तक विदर्भ में और डॉक्टर मुंजे के हाथ से मराठी मध्यप्रांत कांग्रेस बैरिस्टर मोरूभाऊ अभ्यंकर के हाथ में जाने तक मराठी मध्यप्रांत में यही वातावरण रहा। बाद में वहां भी वहीं वायुमंडल आ गया जो पूरे देश में छा रहा था।

लेकिन नागविदर्भ के मुसलमानों की भी मानसिकता पर इन दिनों वही परिणाम था जो अन्य प्रदेशों में था। मोपला विद्रोह तथा खिलाफत आन्दोलन के कारण मुसलमानों में प्रखर सांप्रदायिकता निर्माण हुई, उनका हौसला बढ़ा और स्थान-स्थान पर वे हिन्दुओं पर आक्रमण करने लगे। नागविदर्भ प्रदेश भी इसका अपवाद नहीं था।

हिन्दुओं की धार्मिक शोभा यात्राएँ वाद्य बजाते-बजाते मस्जिद के सामने से जाना, यह हमेशा की प्रथा तिलक युग में भी थी। अब इस बात पर मुसलमानों ने आपत्ति उठाई। आपकी 'दिंडी' हमारे मस्जिद के सामने आएगी उस समय वाद्य-वादन, गीत, घोषणाएँ आदि भी कुछ नहीं होना चाहिये, ऐसा न किया तो हम आपकी 'दिंडी' को आगे नहीं बढ़ने देंगे, मुसलमानों ने ऐसा रुख अपनाया। मुसलमानों की इस धौंस पट्टी (Bulliying tactics) का परिणाम सम्पूर्ण हिन्दू समाज पर हुआ। जो मूलत: हिन्दुत्व निष्ठ नहीं थे उन तटस्थ वृत्ति के हिन्दुओं के लिये भी मुसलमानों की यह दादागिरी सहन करना असंभव हो गया। उसी में से १९२३ में नागपुर में 'दिंडी सत्याग्रह' की आवश्यकता निर्माण हुई। मुसलमानों की इस धौंस पट्टी (Bullyign tactics) का 'जैसे को वैसे' जवाब देना उस दिंडी सत्याग्रह का उद्देश्य था।

यहाँ इस सत्याग्रह का सम्पूर्ण इतिहास देने की आवश्यकता नहीं है। ध्यान में रखने लायक बात यही है कि सामान्यत: जो मुस्लिम विरोधी नहीं थे वे भी अब प्रतिक्रिया के रूप में मुस्लिमों से संघर्ष करने के लिये सिद्ध हो गये और इसी निमित्त से भावात्मक हिन्दुत्वनिष्ठा मन में रखने वाले लोग सत्याग्रह में हिस्सा लेने के लिये आगे आए। सभी के मन में यह भावना थी; किन्तु इस प्रकार के सब लोगों से सम्पर्क स्थापित करके उन्हें कार्य-प्रवृत्त करने का कार्य डॉ॰ हेडगेवार तथा डॉ॰ ल. वा. परांजपे ने स्वयं को पीछे रखकर अन्य लोगों को नेतृत्व सौंपते हुए सफलतापूर्वक किया। इस सत्याग्रह में कौन-कौन शामिल थे यह देखना आज उद्बोधक होगा।

दिण्डी सत्याग्रह लक्ष्मीपूजन के दिन बृहस्पतिवार दि. १ नवंबर, १९२३ से प्रारंभ हुआ। दिन. १७ नवंबर को सरकार की मध्यस्थता से कुछ समझौता हुआ। किन्तु तुरन्त सोमवार दि. १९ नवंबर को कार्तिकी एकादशी के दिन झगड़ा फिर से आरंभ हुआ।

इस सिलसिले में कुछ घटनाएँ उल्लेखनीय हैं। दिण्डी की शोभायात्रा निकली तो यह सम्भावना थी कि डॉ॰ ल.वा. परांजपे के निवास स्थान के सामने उस पर हमला होगा। उस समय स्वयं राजेबहादुर रघुजी राव भोंसले पराजपे के घर के पास दिण्डी आने के समय से दिण्डी पूरी तरह आगे निकल जाने तक खड़े रहे। दिण्डी का नेतृत्व करने वाले लोगों में राजे लक्ष्मणराव भोंसले और उनके ही बाड़े में रहने वाले सर्वश्री मोहिते, महाडिक, शिर्के, पालकर, भोंसले आदि लोग शामिल थे। उनके कंधे से कंधा लगाकर सर गंगाधरराव चिटणवीस, कृष्णशास्त्री घुले, नारायणराव बढ़े, विश्वनाथ व्यंकोबा हरदास, जयकृष्ण उपाध्ये, दादाशास्त्री कायरकर, तिजारे, उदाराम पहलवान, धोंडबा साब, डॉ॰ चोलकर, डॉ. परांजपे, बेलेकर, नारायण पेंटर, गोपालराव ओगले तथा चांदेकर चल रहे थे।

"महाराष्ट्र" पत्रने हर दिन गिरफ्तार हुए लोगों के नाम प्रकाशित किए थे। वह सब पढ़ने से पता चलता है कि दण्डी सत्याग्रह में नागपुर के हिंदू समाज के सभी वर्गों और स्तरों के लोग शामिल हुए थे। केवल नमूने के लिए एक दिन की सूची देखिए—

दि. ६ नवम्बर, मंगलवार, व्यंकटराव निंबालकर, उमराव बालकृष्ण, किसन नारायण क्षेत्रपाल, तुलशीदास लक्ष्मणदास, देवराव विठ्ठलराव, लक्ष्मणराव गणपतराव, बाबूराव गणपतराव, सर्जेराव श्रीपतराव, नारायणराव महितराव, बजरंग लहानगा, दौलतराव मारुतराव, रामचंद्र गोविंद, प्रयागदत्त शुक्ल, शिवगोविंद, छगनलाल, चुन्नीलाल रघुनाथराव निंबालकर, गणपति विठोबा, वासुदेव बाजीराव, मारोतराव बापूजी, जगोबा नारायण और नारायण मनाजी।

यह एक दिन की सूची केवल उदाहरण के नाते प्रस्तुत की है। विदर्भ के बाहर के लोगों के लिए इसमें एक कठिनाई है। विदर्भ के लोग नाम देखते ही उसकी जाति पहचान सकेंगे। लेकिन बाहर के लोगों के लिए यह संभव नहीं है तो भी ध्यान में रखने की बात इतनी ही है कि दिण्डी सत्याग्रह में समाज के सभी वर्गों तथा स्तरों के लोगों ने हिस्सा लिया था। इस अर्थ में वह एक अखिल हिन्दू आंदोलन हो गया था। इस तरह हिन्दू समाज के सभी लोग प्रतिकार के लिए एकत्रित आएँगे ऐसा विरोधियों ने सोचा भी नहीं था। किन्तु प्रत्यक्ष में यह एकत्रीकरण देखकर उन्होंने अपना रुख बदल दिया और दि. १७.११.१९२३ को वे समझौते के लिए तैयार हो गए।

समझौता होने के बाद मुसलमान यह सोचने लगे कि अब हिन्दू समाज सदा के समान असावधान हो जाएगा। इस कारण तुरन्त फिर से कुछ खुराफात शुरू की गई तो हिन्दू असावधान स्थिति में पकड़े जाएंगे। इस विचार से उन्होंने तुरन्त दो-दिन के पश्चात् दि. १९ नवम्बर सोमवार को कार्तिकी एकादशी के दिन फिर से आक्रमण किया। उस दिन दोपहर में ४-३० बजे गांजाखेत भाग में पहली झटपट हुई। दि. २० को मुसलमानों ने कोष्टीपुरे पर हमला किया। किन्तु उदाराम पहलवान आदि लोगों ने मोमीनों को हंसापुरी शनिवारी की ओर खदेड़ा और इस समय पहले से भी जबरदस्त मार मारा। इसी समय हिन्दुओं ने घोषित किया कि शुक्रवार दि. २३ नवम्बर को कार्तिकी पूर्णिमा के दिन गणेश पेठ के गणेश विसर्जन की शोभायात्रा दिण्डी के साथ निकलेगी और नागपुर के सभी मोहल्लों में वाद्य बजाते हुए शुक्रवार तालाब पर गणेशविसर्जन का कार्यक्रम होगा।

दि. १९ और २० के अनुभव के बाद यह घोषणा सुनकर दंगाखोर लोगों के मन में दहशत निर्माण हुई। उन्होंने तुरन्त शौकतअली से सम्पर्क किया।

शौकतअली उस समय मुंबई में बीमार पड़े थे। दि. २१ नवंबर को मुंबई से शौकतअली ने डॉ॰ मुंजे के नाम निम्नलिखित टेलीग्राम भेजा—

"हिन्दू-मुसलमान भाइयों को बंधु-प्रेम का पुराना नाता कायम रखना चाहिए, ऐसी मेरी प्रार्थना है। प्रेम से एकत्रित रहने में ही दोनों का लाभ है। अल्लाह की मेहरबानी से इस बीमारी से दुरुस्त होने के बाद तुरन्त ही मैं नागपुर आऊँगा।'

यह टेलीग्राम कितनी समझदारी का है। किन्तु ध्यान में रखनेलायक बात यह है कि यह समझदारी जागृत होने के लिए दि. १-११ से २१-११ तक की अवधि बिताना पड़ा और दि. २० की ज़बरदस्त मार के पश्चात् ही यह समझदारी निर्माण हुई।

गांधीजी की मुस्लिम नीति गलत है, यह बात कालान्तर से पं. जवाहरलाल नेहरू के भी ध्यान में आई कि यह नीति बदलनी चाहिए। स्वयंघोषित मुस्लिम नेताओं को मुसलमानों का प्रतिनिधि मानकर उनके साथ वार्ता करना गलत है, इससे उनकी सौदेबाजी की वृत्ति बढ़ती ही जाती है, इसके बजाय कांग्रेसियों को सीधे सर्वसाधारण मुसलमानों के पास पहुँचना चाहिए और उनको कांग्रेस की भारतीय राष्ट्रीयता की बात समझनी चाहिए, ऐसा पं. जवाहरलालजी ने दि. १९ मार्च, १९३७ को प्रकट वक्तव्य दिया और यह घोषणा की कि "मैं आज कांग्रेस के मुस्लिम जनसंपर्क अभिमान (Muslim Mass Contact) का सूत्रपात कर रहा हूँ।" किन्तु यह अभियान आगे चला नहीं। जहाँ सूत्रपात हुआ था वहीं उस अभियान का अन्त भी हुआ और क़ांग्रेस पूर्ववत् गांधीजी की मुस्लिम नीति पर ही चलती रही।

कांग्रेस में पहले से ही काम करने वाले राष्ट्रवादी मुसलमान नेताओं को "घर की मुर्गी दाल बराबर" समझकर उनकी उपेक्षा करने और हमेशा गालियाँ-धमकियाँ देने वाले स्वयंघोषित मुस्लिम नेताओं को ही मुस्लिमों का सच्चा प्रतिनिधि मानने की नीति गलत और दुष्परिणामकारक है, ऐसा केवल हिन्दुत्ववादी ही सोचते थे, ऐसा नहीं था। कई जागरुक मुसलमान भी जानते थे कि ये स्वयंघोषित नेता वास्तव में सभी मुसलमानों के प्रतिनिधि नहीं हैं। कांग्रेस के नेता उनको मुसलमानों का प्रतिनिधि मानते हैं, इस कारण सामान्य मुसलमान भी सोचता है कि शायद वे ही

हमारे प्रतिनिधि होंगे। वे जानते थे कि कांग्रेस के साथ होने वाली सौदेबाजी में वे नेता स्वयं अपने ही व्यक्तिगत लाभ का विचार करते हैं, सम्पूर्ण मुसलमान समूह के हित का विचार उनके मन में नहीं रहता। अकबर-ए-इलाहाबादी ने कहा—

आओ तुम्हें दिखाएँ–इस्लाम की रौनक का हाल।
कौन्सिलमें बहोत सैय्यद्–मस्जिद में फकत जुम्मन।।

(सैय्यद याने उच्च-जुम्मन याने निम्नस्तरीय मुसलमान)

X X X X X

प्रत्यक्ष संघकार्य का प्रारंभ सम्पर्कित हिन्दुत्वनिष्ठ प्रौढ़ और प्रमुख रूप से बाल-किशोर तरुणों से करना था, तो भी सम्पूर्ण देश और इस कारण नागविदर्भ में भी समाज का मानसिक वायुमंडल एकदम प्रतिकूल, विरोधी रहा तो नव आरोपित पौधे के लिए मजबूत बाड़ (Fencing) की आवश्यकता रहेगी, यह अनुमान डॉक्टरजी ने पहले से ही कर लिया था।

बाड़ (Fencing) की संकल्पना आते है सक्रिय सहानुभूति रखने वाले, निष्क्रिय सहानुभूति रखने वाले और उपकारक तटस्थता (Benevolent Neutrality) रखने वाले।

नागपुर के बाहर मराठी मध्यप्रांत में और एक स्थान –आर्वीमे– १९२५ में दंगा हुआ। उस निमित्त १४ हिन्दू नेताओं को गिरफ्तार किया गया। उनमें डॉक्टरजी के परमस्नेही डॉ॰ स.नी. मोहरील तथा आर्वी के जुझारू मालगुजार ठाकुर उमरावसिंह बाबासाहेब प्रमुख थे। ये सब जेल में थे तब तक उनके स्वास्थ्य के विषय में उनके परिवार के जीविकोपार्जन के विषय में डॉक्टरजी चिंता करते रहते थे। कारागृह से उनकी मुक्ति के लिए श्री दादासाहेब करंदीकर, बैरिस्टर जोसेफ बॅप्टिस्टा तथा इलाहाबाद के आल्स्ट्सर आदि अधिवक्ताओं को प्रवृत्त करने का काम भी डॉक्टरजी ने किया। आगे भी इन सबके साथ डॉक्टरजी का संबंध कायम रहा। इसके निमित्त डॉक्टरजी का निवास वर्धा में श्री वि.वि. देशपांडे के यहाँ रहता था।

अन्यत्र भी जहां कही कुछ भी गड़बड़ होती थी, (उदाहरणार्थ वाशीम),

डॉक्टरजी वहाँ पहुँच जाते थे। मराठी मध्यप्रांत के पीड़ित लोगों को स्वाभाविक रूप से सर्वप्रथम स्मरण डॉक्टरजी का होता था। पारिवारिक उलझनों को सुलझाने के लिए, पार्टिशन के मामले निपटाने के लिए, वर संशोधन के लिए, विषम विवाह– जैसे जरठ-बालिका विवाह पैसे की लालच में तय किया गया तो वह विवाह तोड़ने के लिए और उस बालिका का विवाह उचित व्यक्ति से कराने के लिए, अच्छे व्यक्ति का हीनता का भाव दूर करने के लिए, गुंडागर्दी को रोकने के लिए, कितने ही छोटे-बड़े कामों के लिए संबंधित पीड़ित लोग डॉक्टरजी की सहायता आत्मीयता के अधिकार से लेते थे।

यह सर्वसाधारण सम्पर्क के क्षेत्र की बात है। किन्तु इतना ही काम बाड़ (Fencing) बनाने के लिए पर्याप्त नहीं था। बाड़ (Fencing) के नाते विशेष रूप से विविध संस्थाओं तथा व्यक्तियों से संबंध बढ़ाना आवश्यक था। इस दृष्टि से डॉक्टरजी के कार्य की छलांग तथा उसका विस्तार मन को आश्चर्यचकित करने वाला था।

उन दिनों देश-कार्य के एक अंग के रूप में लोग व्यायामशालाओं और अखाड़ों की ओर देखते थे। नागपुर व्यायामशाला के श्री अण्णा खोत और आगे चलकर महाराष्ट्र व्यायामशाला के श्री दत्तोपंत मारुलकर की व्यायामशालाओं से डॉक्टरजी के घनिष्ठ संबंध थे ही, किन्तु उनके अलावा नागपुर के सभी अखाड़ों, व्यायामशालाओं तथा पहलवानों से अधिकाधिक संबंध रखने का उनका प्रयास रहता था। युवकों के आकर्षण का केंद्र संगीत की संस्थाएँ–अभिनव संगीत विद्यालय, भारत गायन समाज तथा चतुर संगीत विद्यालय में भी डॉक्टरजी का आना जाना रहता था। इन संबंधों में से ही माननीय यादवराव जोशी संघ को प्राप्त हुए थे, यह सर्वविदित है।

गोसेवक श्री चौंडे महाराज तथा श्री गोपालराव भिडे की गोरक्षण संस्था, श्री वाडेगांवकर का अंधविद्यालय, श्री कृपाशंकर नियोगी का श्रद्धानंद अनाथालय, श्री गोविंद गणेश चोलकर का "अनाथ विद्यार्थी गृह", श्रीधर नारायण हुद्दार की "अभिनव ग्रंथमाला", भोसला वेदशाला, रामकृष्ण मिशन आश्रम, रायफल असोसिएशन, प्रांतिक क्रीड़ा समिति, गणेशोत्सव के मंडल, युवक "मंडलया", अभ्यास "मंडलया, भजन मंडलया और भोजन मंडलया, विधि वाचनालय, तैरना सिखाने के वर्ग—आदि सब उपक्रमों को डॉक्टरजी सक्रिय सहायता देते थे। मानो

वे इन सब संस्थाओं के सक्रिय कार्यकर्ता ही थे। इन माध्यमों से डॉक्टरजी के सम्पर्क में आने वाले युवकों को सहजरूप से त्याग-तपस्या की प्रेरणा मिलती रहती थी। आगे चलकर सन् १९२७ के नागपुर के दंगे में शत्रुओं की बंदूक की बुलेट्स सीने पर झेलकर मृत्यु को आलिंगन देने वाला धुंडिराज लेहगावकर ऐसे ही युवकों में से एक था। सम्पर्क बढ़ाने के लिए डॉक्टरजी विवाह, उपनयन, सत्यनारायण व्रत कथा, नामकरण, शवयात्राएँ आदि सामाजिक प्रसंगों का भी उपयोग करते थे।

सन १९२४ के जुलाई १२ व १३ को ईद और आषाढ़ी एकादशी एक ही समय आई। ऐसे अवसर पर दंगा होना अपरिहार्य था। उस समय हर मुहल्ले में चौकीदारी (गार्डिंग) करने वाले युवकों से डॉक्टरजी बारबार जाकर मिलते थे। शराब की दुकानों पर धरना (पिकेटिंग) देने वाले निर्भय युवकों से भी वे बारबार मिलते थे। डॉ॰ ना.सु. हर्डीकर द्वारा १९२३ से चलाएं गए "हिन्दुस्थानी सेवादल" के कार्यकर्ता, संत पांचलेगावकर महाराज के "मुक्तेश्वर दल" के युवक, अमरावती के डॉ॰ शिवाजीराव पटवर्धन तथा श्री असनारे द्वारा चलाये गये "हनुमान व्यायाम प्रसारक मंडल" के व्यायामपटु लोगों के मन में डॉक्टरजी के विषय में आत्मीयता का भाव रहता था।

संघ-स्थापना के पूर्व और स्थापना के बाद भी कई वर्षों तक डॉक्टरजी मराठी मध्यप्रांत के कांग्रेस तथा हिन्दू महासभा में विविध पदों पर रहते हुए काम करते थे। इस कारण मध्यप्रांत के इन दोनों दलों के कार्यकर्ताओं से उनके निकट संबंध थे, यह बात सभी जानते है; किन्तु एक घटना उतनी मात्रा में लोगों के ख्याल में नहीं है। दि. १२ जुलाई, १९२२ को जेल से मुक्त होकर बाहर आने के बाद डॉक्टरजी का अभिनन्दन करने के लिए जो प्रकट सभा हुई उसमें प्रादेशिक कांग्रेसी,—हिन्दूसभाई नेताओं के अलावा पं. मोतीलालजी नेहरू और हकीम अलमलखां के भी डॉक्टरजी के अभिनंदन में भाषण हुए। डॉ. ना. भा. खरे सभा के अध्यक्ष थे।

डॉक्टरजी बीच-बीच में महात्माजी के वर्धा आश्रम में जाते थे। वर्धा के "राजस्थान केसरी" साप्ताहिक के संपादक श्री राम गोपालजी विद्यांलकार ही प्राय: डॉक्टरजी का स्वागत करते थे। ऐसे अवसर पर डॉक्टरजी के साथ प्राय:-रामभाऊ

पिंगले, वामनराव घोरपडे, राजाभाऊ डांगरे आदि मित्र रहते थे। उन दिनों वर्धा आश्रम में जे.सी. कुमारप्पा, "नई तालीम" ख्याति के आर्यनायकम् दंपति, श्रीकृष्णदासजी जाजू, किशोरीलाल मश्रूवाला, श्रीमन्नारायण, सौभाग्यवती जानकीदेवी बजाज, दादा धर्माधिकारी, आचार्य भणसाली आदि नामवंत लोग रहते थे, उन सबसे से मिलकर उनके स्वास्थ्य की पूछताछ करने का काम डॉक्टरजी करते थे।

वर्धा में ही श्री रालेगणकर के आवास में गंगाप्रसादजी के नेतृत्व में पूर्व क्रांतिकारियों के पुनर्वसन के उद्देश्य से डॉक्टरजी द्वारा योजनापूर्वक चलाई गई "राष्ट्रीय मल्ल विद्याशाला" देखने के लिए डॉक्टरजी अकेले ही जाते थे। इस संस्था में पंजाब के १२-१३ और उस समय के सेन्ट्रल प्राव्हिन्सेस के १२/१३ युवक आश्रय लिए हुए थे।

डॉक्टरजी "स्वातंत्र्य" दैनिक चलाते थे उस समय श्री वासुदेवराव फडणवीस, श्री अच्युत बलवंत कोल्हटकर, डॉ. शं. दा. पेंडसे, के साथ उनकी घनिष्टता प्रतिस्थापित हुई। यह घनिष्ठता मतभेदों के बावजूद अन्त तक कायम रही।

१९२० के पश्चात् कांग्रेस के चुनाव राजनीति में प्रवेश करने के पूर्व मराठी भाषी प्रदेशों में जातियतावादी अवांछनीय तत्वों का चुनावों में विरोध करने का काम "राष्ट्रीय पक्ष" ने किया। उस पक्ष के प्रमुख नेता थे बैरिस्टर रामराव देशमुख, बाबासाहेब खापर्डे, वर्धा के मनोहरपंत देशपांडे तथा गोविंदराव चरडे, येलीकेली के डॉ॰ धोपटे, हिंगणघाट के नागले वकील और चंद्रपुर के बलवंतराव देशमुख। इन सब लोगों का उपयोग, इस विपरीत वायुमण्डल में, स्वाभाविक रूप से बाड़ (Fencing) के नाते हुआ।

नागपुर के बार असोसिएशन के कई सदस्यों, अधिवक्ताओं ने भी यह भूमिका निभाई। अधिवक्ता बाबाजी पाध्ये, भैय्यासाहेब बोबडे, बलवंतराव मंडलेकर तथा गोपालराव देव का ग्रुप इस दृष्टि से प्रसिद्ध था। दादासाहेब शेवडे, दा. तु. मंगलमूर्ति भी इसी श्रेणी में आते थे। दत्तोपंत देशपांडे तथा बाबूराव कान्हे का अलग से उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है।

बाड़ बनाने का यह काम कुछ संत पुरुषों के आशीर्वाद से भी हुआ। "गोमंतक शुद्धि" आन्दोलन के प्रवर्तक विनायक महाराज मसूरकर, संत पांचलेगावकर,

मोझरी के "राष्ट्रसंत" तुकडोजी महाराज, स्वामी सत्यदेव, गोभक्त चौंडे महाराज, स्वामी शिवानंद, शंकराचार्य डॉ० कुर्तकोटी और श्रीमंत शाहू छत्रपति द्वारा निर्मित पीठ के क्षात्र जगद्गुरु, आदि सभी संत अपने-अपने कार्य से जो वातावरण निर्माण करते थे, उसके कारण भी संघकार्य के लिए अनुकूल मानसिकता निर्माण होने में सहायता होती थी।

संघ के शारीरिक कार्यक्रमों के प्रवर्तक श्री अण्णा सोहोनी का नाम सबको पता है। किन्तु शारीरिक शिक्षा में इनके गुरुदेव श्री दामोदर बलवंत उपाख्य "भिडे भटजी" का नाम लोग नहीं जानते। वे श्रेष्ठ क्रांतिकारी थे। उन्होंने ही सेनापति बापट को क्रान्तिकार्य की दीक्षा दी थी। "भिडे भटजी" को संघ की शारीरिक शिक्षा का मूलस्रोत होने की संज्ञा दी जा सकती है।

आज यह सुनकर लोगों को आश्चर्य होगा कि संघ का घोष विभाग निर्माण होने का कुछ श्रेय श्रीमंत दाजीसाहेब बुटी को भी जाता है। किन्तु यह योगदान उन्होंने जानबूझकर नहीं किया। उनके द्वारा यह योगदान हो रहा है इसकी उनको कल्पना भी नहीं थी। चातुर्मास में उनके यहाँ भोजन की पंक्तियाँ होती थीं। भोजन करने वाले हर एक व्यक्ति को "दक्षिणा" में चार आना धन देने की उनकी प्रथा थी। संघ में प्रथम बिगुल खरीदने का विचार आया उस समय उसके लिए आवश्यक पैसा संघ के पास नहीं था। घोष के अन्य वाद्य खरीदने के लिए भी पैसे की आवश्यकता थी। उस समय योजना बनी कि अधिक से अधिक स्वयंसेवकों ने बुटी के यहाँ जाना, चार आना दक्षिणा लेना और वह संघ के कोष में घोष के निमित्त जमा करना, इसी तरह निधिसंग्रह होकर घोष विभाग का प्रारंभ हुआ।

नियमित सम्पूर्ण घोष की रचना १९२९ में हुई। घोष की शिक्षा देने का काम सैनिकी सेवा से निवृत्त एक ईसाई बादनपटु ने किया। उनका नाम आज उपलब्ध नहीं। उनकी सेवा संघ के लिए उपलब्ध करा देने का काम श्री व्हिव्हियन बोस और बैरिस्टर गोविंदराव देशमुख ने किया था।

ज्ञानकोशाकार डॉ० श्रीधर व्यंकटेश केतकर का नाम अधिक प्रसिद्ध नहीं था तभी से डॉक्टरजी की सम्पर्क सूची में उनका नाम समाविष्ट था। उसका विशेष कारण भी था। पटवर्धन मैदान पर एक सभा में उन्होंने कहा था कि अब देशकार्य

करने के लिए गैरिक वस्त्र परिधान धारण न करते हुए सर्वसामान्य लोगों के समान ही रहन-सहन रखकर संन्यासी की वृत्ति से कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। उनके इस वक्तव्य के विषय में समकालीन विचारवंतों में बहुत समय तक चर्चा चली थी।

बाड़ बनाने का एक हिस्सा इस नाते पश्चिम महाराष्ट्र में जाने के बाद उधर के "लोकशाही स्वराज्य पक्ष" के श्री नरसिंह चिंतामण केलकर, हिन्दूसभा के ल.ब. भोपटकर आदि नेतागण के "देवदर्शन" के लिए जाने का नित्यक्रम डॉक्टरजी ने अन्त तक जारी रखा। उन दिनों हिन्दुत्व का उद्घोष करना अतीव साहसिक कार्य था। लाला हरदयाल, स्वामी श्रद्धानंद, भाई परमानंद, स्वामी सत्यदेव आदि यह कार्य हिम्मत के साथ कर रहे थे। इस कारण उन सबके विषय में सभी हिन्दुत्वनिष्ठ लोगों के मन में कृतज्ञता की भावना रहती थी। उन सबका आशीर्वाद संघकार्य के लिए प्राप्त हो यह प्रयास डॉक्टरजी हमेशा करते रहते थे। पं॰ मदनमोहन मालवीय, बाबू पदमराजजी जैन, सर गोकुलचंद नारंग, सावरकर बंधु, बरदराजलू नायडू का सहकार्य डॉक्टरजी ने संघकार्य के लिए पहले ही प्राप्त कर लिया था। बैरिस्टर जयकर, प्रताप सेठ, डॉ॰ श्री व्यं.केतकर आदि की सक्रिय सहानुभूति भी संघ को प्राप्त थी। डॉ॰ श्यामाप्रसाद मुखर्जी के विषय में अलग से लिखने कहने की आवश्यकता नहीं है।

नागपुर में दिण्डी सत्याग्रह के कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त परावर्तन पटु जगन्नाथ प्रसाद वर्मा, बृहत् सभा में हिन्दुत्व विरोधी वक्ता की धोती छीनकर उसको पूर्ण नग्नावस्था में सभा के बाहर भागने के लिए बाध्य करने वाले बिंदुमाधव पुराणिक, डॉ॰ मुंजे का गेंडे का बड़ा चित्र बनाकर उसका जुलूस निकालने वाले प्रचंड जुलूस में अचानक हिम्मत के साथ घुसकर वह चित्र फाड़ने वाले उत्साही कार्यकर्ता आदि सभी लोगों के साथ डॉक्टरजी संबंध रखते थे। मालगुजार लोगों के "नरेन्द्र मण्डल" की चर्चा इसके पूर्व की जा चुकी है।

प्रत्यक्ष संघ के स्वयंसेवक तथा समर्थकों के वर्तुल के बाहर डॉक्टरजी के किस-किस के साथ कितने गहरे संबंध थे, इसकी जानकारी रख पाना नई पीढ़ी के लोगों के लिए सम्भव नहीं है। यह सब जानते है कि कांग्रेस के प्रदेशाध्यक्ष बैरिस्टर मोरूभाऊ अभ्यंकर के मन में डॉक्टरजी के विषय में सम्मान की भावना थी।

जनरल मंचरशा आवारी से भी उनका निकट संबंध था। आवारी के शस्त्र सत्याग्रह के समय डॉक्टरजी ने उनको एक मूल्यवान सुझाव दिया था कि सत्याग्रह करने वाले लोगों के हाथों में असली शस्त्र देने से उसके कारण अपने संग्रह के असली शस्त्र अनायास सरकार के हाथ में चले जाते है। अत: असली की बजाय नकली तलवारें सत्याग्रहियों के हाथ में देंना अच्छा रहेगा। डॉक्टरजी का यह सुझाव आवारीजी ने तुरन्त अमल में लाया था। फॉर्वर्ड ब्लॉक के नेता और मजदूर आंदोलन के प्रवर्तक रामभाऊ रुईकर की बात सब जानते हैं। किन्तु मेरठ षड्यंत्र काण्ड में गिरफ्तार एक कम्युनिस्ट नेता, जिस कम्युनिस्टों ने १९२५ में मुंबई के अधिवेशन में आइटुक (AITUC) पर कब्जा जमाया, उस समय के AITUC के सर्वप्रथम कम्युन्सिट अध्यक्ष के नाते निर्वाचित हुए थे, वे श्री धुंडिराज पंत ठेंगड़ी डॉक्टरजी को छोटा भाई समझकर उनसे प्रेम करते थे, यह बात उतनी प्रसिद्ध नहीं है। वे डॉक्टरजी को कहते थे, "केशव! तू तेरे संघ के गणवेशधारी दस हजार स्वयंसेवकों का पथ संचलन बम्बई में करके दिखा दे, तो मैं तुझे दस लाख रुपया इकट्ठा करके देता हूँ।"

आज की पीढ़ी के लोग श्री वामनराव घोरपड़े के बारे में इतना ही जानते हैं कि वे कांग्रेस में रहते हुए भी ब्राह्मणेतर पक्ष के एक नेता थे। किन्तु श्री घोरपड़े से डॉक्टरजी के निकट संबंध थे और डॉक्टरजी के विविध कार्यों में वे सहभागी होते थे। वैसे ही अमरावती के श्री नानासाहेब गवई डॉक्टरजी के सम्बंधों के कारण यह भूल जाते थे कि वे तथाकथित अस्पृश्य जाति के हैं।

मध्यप्रान्त विधान सभा में मार्च १९३४ के अधिवेशन में संघ के समर्थन में कई सदस्यों ने भाषण दिये थे। उनके नाम पढ़कर समकालीन भी आश्चर्यचकित हो गए थे। श्री काशीप्रसाद पांडे तथा श्री बाबासाहेब कोलते के कटौती प्रस्ताव (Cut-motion) पर बोलने वालों में अधिवक्ता तु.ज. केदार, सौभाग्यवती रमाबाई तांबे, बाबासाहेब खापर्डे, उमेदसिंह ठाकुर, मंगलमूर्ति, सी.बी. पारख, श्री रहमान और श्री फुले शामिल थे।

इस आलेख में विजयादशमी १९२५ के पूर्व बाढ़ बनाने की दृष्टि से डॉक्टरजी ने दूरदर्शितापूर्वक जो सम्पर्क बढ़ाए और परिश्रम किए उनका ही वर्णन अभिप्रेत है। संघ स्थापना के पश्चात् संघ का इतिहास सब जानते हैं। उसका वर्णन

यहाँ अभिप्रेत नहीं है तो भी कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करने के लिए यहाँ एक अपवाद करना अप्रासंगिक नहीं होगा। बिल्कुल प्रारंभिक काल में जब संघ की नींव डाली जा रही थी उस अवधि में नींव के पत्थर के नाते जिन्होंने स्वयं को इस काम में झोंक दिया ऐसे लोगों का स्मरण करना आवश्यक है। यह स्वाभाविक है कि वे सब प्रारंभिक लोग नाग-विदर्भ के ही होंगे। सदैव से पूज्य आप्पाजी जोशी ने उन सबके नामों का संकलन उपलब्ध करा दिया है। केवल कृतज्ञ स्मरण के नाते उन सबके नाम दृष्टिगत करने से भी ऋषिऋण की आंशिक पूर्ति हो सकती है।

"श्री बलवंतराव दाणी, अड़ेगाव के श्री शंकराराव भगत, भंडारा के डॉ॰ व्यवहारे, श्री गणपतराव देव, चन्द्रपुरके नानासाहेब भागवत, डॉ॰ तेलंग, श्री बाबाजी वेखंडे, वरोडा के श्री देवराव पाटिल, वणी के श्री लाटूजी पटिल, श्री अण्णाजी देशमुख, श्री आबाजी भेदी, डॉ॰ यादवराव अणे, यवतमाल के वामनराव धर्माधिकारी, अमृतराव साकले। अमरावती के डॉ॰ सोमण, श्री बामणगांवकर, अकोला के श्री गोपालराव चितले, श्री मामा जोगलेकर तथा श्री रामधन।

नागपुर के आप्पाजी गांधी, रामभाऊ गोखले, वढे, बुवा उपाध्ये, बाबूराव उलाभाजे, राजाभाऊ डांगरे, आप्पाजी तिजारे, बामनराव घोरपड़े, रामभाऊ पिंगले, दत्तोपंत परांजपे, मोहोपा के आप्पासाहेब हलदे, खापा के श्री आनंदराव घाडगे, सावनेर के श्री प्रभाकरपंत हरकरे, काटोल के डॉ॰ पाचखेडे, श्री बलवंतराव पाचखेडे, भाऊसाहेब घाटे, मुलमुले, रामटेक के श्री आण्णाजी जोशी, उमरखेड के तात्याजी वान्नेरे, वर्धा के मनोहरपंत देशपांडे, गोविंदराव पांडे, गोविंदराव चरडे, त्रिंबकराव (टी.पी.) देशपांडे, व्यंकटेश (वी.वी.) देशपांडे, येलीकेली के डॉ॰ धोपटे, पवनार के नानाजी देशमुख, गणपतराव जोशी, तात्याजी उपदेव (सेलू), दादासाहेब सूबेदार मुरलीधर लाला कक्कड (हिंगणी), थाजीराव अमृतराव कोटंबकर (कोटंबा), लक्ष्मणराव तथा भगवानराव गोल्हर (देवली) त्र्यंबकराव देशपांडे (सालोडफकीर), भालेराव देशमुख (तलेगांव), अंबादासपंत काले तथा भाऊजी पुराणिक (नाचणगाव), बाबासाहेब देशपांडे, नानासाहेब टालाटुले (सिंदी), विश्वासराव उंबरकर (उत्तमपूर), बापूजी अगस्ति, नारायण गोपाल देशपांडे, डॉ॰ मोहरील, डॉ॰ दे.र. (अण्णा) देशपांडे, आनंदराव अंबाड़े (आर्वी), श्यामराव देशपांडे (आष्टी) गोविंदराव देशमुख (कारंजा) बाबाजी उन्दरे (तिरोड़ा), महादेवराव

आण्याजी देशमुख, (वाढोणा) आदि का नाम उल्लेखनीय है। (तरुण भारत, पुणे रजत जयंती विशेषांक)

एक संस्कृत साहित्यिक ने मालाकार (माली) को कहा है कि वर्षाऋतु प्रारंभ होने के पश्चात् प्रचंड वृष्टि चल रही हो। ऐसे समय तू वृक्ष को जो एक सौ घड़े पानी हर दिन दे रहा है उसका महत्व उस वृक्ष की दृष्टि से उतना नहीं है, जितना ग्रीष्म ऋतु में सभी वृक्ष जब जड़मूल से सूख रहे थे उस समय किसी ने उस वृक्ष को जो एक-एक घड़ा पानी डाला था, उसका है।

इसी दृष्टि से इन सब नींव के पत्थरों को कृतज्ञतापूर्वक शतशत प्रणाम।

X X X X X

'विजय ही विजय'

''हम स्वयंसेवक हैं। जिस प्रकार कहीं भी रखे गए अंगारे अपने आसपास ऊष्णता फैलाते हैं उसी प्रकार एक-एक अग्निपुञ्ज के समान अपना प्रत्येक स्वयंसेवक हर क्षेत्र में जाकर अपने गुण, अपनी तेजस्विता, अपने व्यवहार-माधुर्य से प्रभाव उत्पन्न करने वाला चाहिए। अपने चारों ओर संघ के लिए योग्य वायुमंडल तथा अत्यंत श्रद्धा का भाव उत्पन्न करने वाला चाहिए। इसके विपरीत यदि अन्य क्षेत्रों में पाई जाने वाली कई प्रकार की न्यूनताओं को हमने अपने अंदर आने दिया और वहां दिखाई देने वाली व्यक्तिगत ईर्ष्या और स्पर्धा का स्वयं को शिकार बनने दिया तो कहना पड़ेगा कि स्वयंसेवक का कर्त्तव्य हमने नहीं निभाया।''

''..... समग्र समाज को अपने स्नेह के, आत्मीयता के, ध्येयवाद के नियंत्रण में अपने साथ लेकर चलने वाला प्रबल, संगठित, सामर्थ्यशाली हिन्दू समाज यदि राष्ट्रव्यापी बनकर खड़ा रहा तो राजसत्ता नियंत्रित रहेगी। चाहे कोई भी दल राजसत्ता पर बैठे; परन्तु सबको प्रणाम यहीं करना होगा जहाँ समाज की निःस्वार्थ सेवा मूर्तिमंत प्रगट हुई है, ऐसी स्थिति उत्पन्न करना है।''

''..... साथ ही हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि शाखा के बिना हम भिन्न-भिन्न कार्य नहीं कर पाएंगे। जहाँ अपनी शाखा अच्छी प्रकार से चलती है, वहाँ कोई भी कार्य उठाया तो उसे हम निश्चयपूर्वक सफल कर सकते हैं। अतः संघ-शाखा के कार्यक्रम, उसकी आचार पद्धति, स्वयंसेवक का व्यवहार,स्वभाव तथा उसके गुणोत्कर्ष आदि की ओर हम ध्यान दें और उनका प्रसार तथा दृढ़िकरण करने का एकाग्रचित्त से प्रयत्न करें। इतना यदि हम करेंगे तो सब क्षेत्रों में हम लोग विजय प्राप्त करेंगे और जितना यह कार्य दृढ़ता से चलेगा और इसे हम एक अन्तःकरण से करेंगे, उतनी अपने लिए सर्वदूर "विजय ही विजय" है, ऐसा मैं पूर्ण विश्वास से कहता हूँ।''

– पूजनीय श्रीगुरु जी